हिन्दी चेतना

हिन्दी प्रचारिणी सभा, कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna • Quarterly Magazine of Hindi Pracharini Sabha, Canada
वर्ष १३, अंक ५१, जुलाई २०११ • Year 13, Issue 51, July 2011

इस अंक में

सम्पादकीय		03
पाती		04
वानप्रस्थ आश्रम –	● प्रदीप कुमार	09
कहानी...		
फरिश्ता	● पंकज सुबीर	11
कच्चा गोश्त	● ज़कीया ज़ुबैरी	17
केतलीना	● अर्चना पेन्यूल	23
आलेख		
अमेरिका के...	● डॉ. सुधा ओम ढींगरा	32
वैश्विक मुद्दों से ...	● ओंकारेश्वर पांडेय	36
कविताएं..		
इतिहास	● कृष्ण कुमार यादव	40
एक अंतर्द्वंद्व	● सर्वेश अस्थाना	40
बागवान	● अलका सैनी	40
निर्झरणी	● भगवत शरण	41
और सामूहिक	● अमित कुमार सिंह	41
ग़ज़ल	● प्रकाश अर्श	42
ग़ज़ल	● नित्यानंद 'तुषार'	42
आँसू की नदी	● नरेन्द्र व्यास	43
गर्भ में तुम्हारे!		43
मिजाज़		43
भाषांतर	● रमेश शौनक	45
विगत स्मृति	● विजया सती	45
'प्रकृति'	● रेखा भाटिया	45
उम्मीद कायम रहे	● दीपक 'मशाल'	46
निर्णायक	● अनिल प्रभा कुमार	46
बालकहानी		
नाग देवता	● सुधा भार्गव, भारत	47
लघु कथाएं...		
चादर	● सुकेश साहनी	48
सहानुभूति	● डॉ. सतीशराज	48
माँ का कमरा	● श्याम सुन्दर अग्रवाल	49
पुस्तक समीक्षा		
उत्तर-कथा	● चंदन कुमारी	50
बरहा	● सुदर्शन प्रियदर्शिनी	53
साहित्य समाचार		**58-61**
चित्रकाव्य कार्यशाला		57
विलोम चित्रकाव्य शाला		63
अधेड़ उम्र में थामी...	● प्रतिभा सिंह	65
अखिरी पन्ना	● डॉ. सुधा ओम ढींगरा	68

23 ◂

केतलीना

अर्चना पैन्यूली

11 ▸

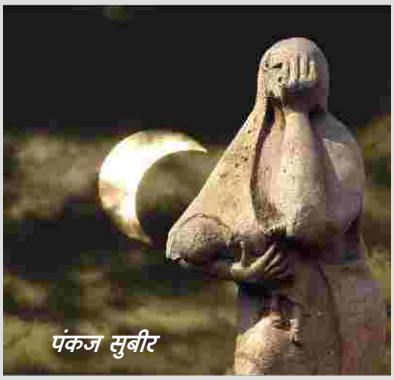

फरिश्ता

''हिन्दी चेतना'' सभी लेखकों का स्वागत करती है कि आप अपनी रचनायें प्रकाशन हेतु हमें भेजें। सम्पादकीय मण्डल की इच्छा है कि ''हिन्दी चेतना'' साहित्य की एक पूर्ण रूप से संतुलित पत्रिका हो, अर्थात साहित्य के सभी पक्षों का संतुलन। एक साहित्यिक पत्रिका में आलेख, कविता और कहानियों का उचित संतुलन होना आवश्यक है, ताकि हर वर्ग के पाठक पढ़ने का आनन्द प्राप्त कर सकें। इसीलिए हम सभी लेखकों को आमंत्रित करते हैं कि हमें अपनी मौलिक रचनाएँ ही भेजें। अगले अंक के लिए अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भेज दें। अगर संभव हो तो अपना चित्र भी साथ अवश्य भेजें।

रचनाएँ भेजते हुये निम्नलिखित नियमों का ध्यान रखें :

1. *हिन्दी चेतना अप्रैल, जुलाई, अक्टूबर तथा जनवरी में प्रकाशित होगी।*
2. *प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।*
3. *पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर लिखित रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जायेंगी।*
4. *रचना के स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।*
5. *प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जायेगा।*
6. *पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।*

•

संरक्षक एवं प्रमुख सम्पादक
श्री श्याम त्रिपाठी, कैनेडा

•

सम्पादक
डॉ. सुधा ओम ढींगरा, अमेरिका

•

सहयोगी सम्पादक
डॉ. निर्मला आदेश, कैनेडा
अभिनव शुक्ल, अमेरिका
डॉ. अफ़रोज़ ताज, अमेरिका
आत्माराम शर्मा, भारत
अमित कुमार सिंह, भारत

•

परामर्श मंडल
पद्मश्री विजय चोपड़ा, भारत
मुख्य सम्पादक, पंजाब केसरी पत्र समूह
पूर्णिमा वर्मन, शारजाह
सम्पादक, अभिव्यक्ति-अनुभूति
तेजेन्द्र शर्मा, लंदन
महासचिव, कथा यू.के.
विजया माथुर, कैनेडा
सरोज सोनी, कैनेडा
राज महेश्वरी, कैनेडा
श्री नाथ द्विवेदी, कैनेडा
डॉ. कमल किशोर गोयनका, भारत
चाँद शुक्ला 'हदियाबादी', डेनमार्क
डायरेक्टर, रेडियो सबरंग,
अध्यक्ष, वैश्विक समुदाय रेडियो प्रसारण माध्यम

•

विदेश प्रतिनिधि
आकांक्षा यादव, अंडमान-निकोबार
मुर्तजा शरीफ, पाकिस्तान
राजेश डागा, ओमान
दीपक मशाल, यू.के.
उदित तिवारी, भारत
डॉ. अंजना संधीर, भारत
विनोद चन्द्र पाण्डेय, भारत

•

सहयोगी
सुषमा शर्मा, आलोक गुप्ता, भारत
अदिति मजूमदार, कैनेडा

मुख्य पृष्ठ : अरविन्द नराले

जीवन की बगिया में खिलते सुमन रंगीले,
लाल, गुलाबी, हरे, बैंगनी, नीले, पीले,
जिसने इनसे मधु चुराया अनुभव वाला,
वही बन सका 'बच्चन', 'दिनकर' और 'निराला'।

– अभिनव शुक्ल

विशेष सूचना

पाठको! 'हिन्दी चेतना' का इस वर्ष का विशेषांक व्यंग्य यात्रा के संपादक प्रतिष्ठित व्यंग्यकार, डॉ. प्रेम जनमेजय को समर्पित होगा।

Hindi Chetna is a literay magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. Shiam Tripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi Literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought many local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

HINDI CHETNA

6 Larksmere Court, Markham, Ontario, L3R 3R1
Phone : (905) 475 - 7165 Fax : (905) 475 - 8667
e-mail : hindicehetna@yahoo.ca

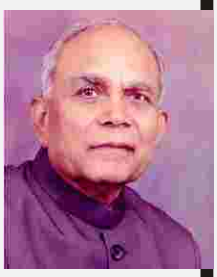

संपादकीय

लोग पत्रों में अपने सुन्दर भावों के गुलदस्ते हमें भेजते हैं और हम उन्हें समेट कर, सजा कर स्नेह से दूसरे अंक में महकने के लिए आप तक पहुँचा देते हैं। निःसंदेह ये पत्र हमें बहुत प्रोत्साहन और प्रेरणा देते हैं और उनमें दिए गए उचित सुझावों से अगले अंक में परिवर्तन भी लाने की कोशिश हम करते हैं। पाठक और रचनाकार हमारी प्राथमिकता है पर हमें खेद है कि कई बार बहुत–सी रचनाएँ हम प्रकाशित नहीं कर पाते क्योंकि हमारी पत्रिका त्रैमासिक है और अक्तूबर का अंक विशेषांक होता है। हर अंक के बाद रचनाओं की बाढ़ सी आ जाती है। अथाह सामग्री में रचनाओं का चुनाव करना कठिन हो जाता है। पर हमारी टीम स्तरीय रचनाओं को प्रमुखता देती है व सब के साथ न्याय करने की पूरी कोशिश करती है। कई पाठकों ने अपनी रुचि जाहिर की थी कि वे जीवन के अनुभवों से लबालब भरे हुए हैं और बहुत कुछ कहना व लिखना चाहते हैं पर उनको अपनी लेखन क्षमता पर विश्वास नहीं क्योंकि वे उम्र के उस हिस्से में कलम पकड़ने की सोच रहे हैं जब बहुत से लोग रिटायर हो चुके होते हैं। उनके इस एहसास को हमने महसूस किया और 'अधेड़ उम्र में थामी कलम' स्तम्भ शुरू कर दिया, जिसमें वे निस्संकोच लिख सकते हैं।

कभी–कभी यह विचार झंझोड़ता है कि क्या संसार की अन्य भाषाओं में भी हिंदी जैसी समस्याएँ चल रही होंगी। क्या अंग्रेजी के लेखकों में अपनी भाषा के प्रति ऐसी उदासीनता पाई जाती है जो हिन्दी भाषियों में अपनी भाषा के प्रति है। उनमें आपसी स्पर्धा, ईर्ष्या–द्वेष होता होगा जो हिंदी भाषियों में हो रहा है। हिन्दी भाषी चाहे भारत में हों या भारत से बाहर कुछ मामलों में परिवर्तित नहीं होते। वे अनेकों हिंदी की संस्थाएं हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार के उद्देश्य को लेकर बनाते हैं किन्तु एक संस्था दूसरी संस्था को टिकने नहीं देती। जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है। इसी प्रकार हिंदी की संस्थाओं में ऐसी ही मारा–धाड़ी चल रही है। शायद विश्व का दूषित वातावरण भी इसके लिए ज़िम्मेदार हो। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व कई गुटों में बंट गया और हर गुट शान्ति की बात करने लगा और परिणाम देखने को मिला कि सोवियत रूस आज लुप्त सा हो गया है। जिधर देखो उधर अशांति और अनैतिकता का वातावरण है। आतंकवाद ने तो विश्व की नींद ही उड़ा दी है। हर पल विश्व पटल पर नये विश्व युद्ध के बादल मंडराते नज़र आते हैं और विवश अन्तर्राष्ट्रीय संघ विश्व में अशांति देखकर अपने आँसू बहा रहा है। ठीक यही हालत आज हिंदी भाषा की है। लोग संस्थाओं की आड़ में अपने मूल उद्देश्य को भूल कर भाषा के नाम पर अपने निजी स्वार्थ पूरे कर रहे हैं। इस पत्रिका के माध्यम से हमारा लक्ष्य विश्व के साहित्यकारों को एक मंच प्रदान कर उनके मध्य सेतु बन उनकी बात और हिन्दी साहित्य व भाषा को दुनिया के कोने–कोने तक पहुँचाना है। यह कार्य हम हिंदी प्रेमियों के सहयोग के बिना पूर्ण रूप से नहीं कर सकते हैं। हमें आशा है कि अधिक से अधिक हिंदी के पाठक इसकी सदस्यता ग्रहण करेंगे और हमारे इस हिंदी के अभियान में हमारा हाथ बटायें।

आपका
श्याम त्रिपाठी

हिन्दी चेतना को पढ़िये, पता है :
http://hindi-chetna.blogspot.com

हिन्दी चेतना की समीक्षा अवश्य देखें :
http://KathaChakra.blogspot.com

घर बैठे पुस्तकें प्राप्त करें :
http://www.pustak.org

हिन्दी चेतना को आप ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं :
Visit our Web Site :
http://www.vibhom.com
or home page **पर**
publication **में जाकर**

पाती

ऑन लाईन 'हिन्दी चेतना' मिली। अधेड़ उम्र में थामी कलम में संस्मरण 'तुम्हारा केवल इतना ही सम्बन्ध था' पढ़ा, लगा, हमारे अपने ही घर की कहानी हरीश चन्द्र शर्मा ने लिख दी है। मैंने अपनी माँ को सारी कथा पढ़ कर सुनाई। इस संस्मरण ने वर्षों से यादों पर पड़ी राख हटा दी। माँ बहुत वृद्ध हैं, पढ़ नहीं सकतीं, कई बार मुझसे इस लेख को सुन चुकी हैं। हर बार आँखें नम हुई हैं और बेटे की याद में डूब-डूब गई हैं। लेखक के लेखन की सार्थकता वहीं हो जाती है जब उसकी रचना किसी के दिल को छू जाती है। दिल तो सैंकड़ों घावों से भरा रहता है। यह कॉलम बहुत उचित है कोई भी अपने मन के भाव व्यक्त कर सकता है, चाहे उसे लिखना न भी आता हो। पत्रिका की शेष रचनाएँ बहुत स्तरीय हैं। मुझे पढ़ने का शौक है और बहुत सी पत्रिकाएँ पढ़ता हूँ, हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पत्रिका लगी मुझे। देर से ही सही पर मेरा इसके साथ परिचय तो हुआ। मैंने वेब पर पुरानी सभी हिन्दी चेतना देखीं, पढ़ने में समय लगेगा। डॉ. नरेन्द्र कोहली, डॉ. कामिल बुल्के और महामना मदनमोहन मालवीय जी पर विशेषांक देख कर हैरानी हुई। यह पत्रिका हिन्दी जगत को इतना कुछ दे रही है और मैं इससे अनभिज्ञ था। हिन्दी चेतना का इतिहास अपनी वेब साईट और ब्लॉग पर ज़रूर लिखें ताकि कोई भी पहली बार आपको विज़िट करे तो उसको आप के बारे में पता चल जाए।

अनेकों शुभकामनाओं के साथ,
अनूप बत्रा, सनफ्रांसिस्को, यू.एस.ए

"हिन्दी चेतना' मेरे इन बॉक्स में ईमेल से आई। अंतर्राष्ट्रीय साहित्यकारों को एक मंच पर देख कर अति प्रसन्नता हुई। कृपया हर अंक आप मुझे भेजा करें। रोचक सामग्री से लैस स्तरीय पत्रिका कौन नहीं पढ़ना चाहेगा? विविध विषय, विभिन्न विधाएं समेटे हुए है यह पत्रिका। सभी कहानियाँ अच्छी हैं पर कहानी उत्तरायण उदास कर गई। अनिल प्रभा कुमार और रेखा मैत्र की कविताएँ पसंद आईं। पत्रिका की साज-सज्जा बेहद सुन्दर। विलोम चित्र काव्य शाला, चित्रकाव्य -कार्य शाला को समझ लूँ फिर मैं भी भाग लूंगी, ये पृष्ठ नयापन लिए हुए हैं। आपकी टीम में जो भी आप की पत्रिका सजाता है उसे बधाई दें।

सुलभा जैन, बैंकाक

'हिन्दी चेतना' का नया अंक अभी देख रही हूँ। ग़ज़ल और कविताएँ भा रही हैं। तेजेन्द्र जी की कहानियों पर आलेख बहुत अच्छा लिखा गया है। पुस्तक समीक्षाएँ बेहद उपयोगी और सार्थक लिखी हैं, इतने अच्छे प्रयास के लिए हार्दिक बधाई।

विजया सती
विजिटिंग प्रोफ़ेसर, बुदापैश्त

पूरा अंक पढ़ा। आदि से अंत तक पढ़ा। शैलजा की कहानी प्रभावशाली लगी। सड़क दुर्घटना में कंधे में अभी हाल ही में लगी दुखदाई चोट पर मेरी पोती की भी कुछ ऐसी ही प्रतिक्रिया थी।

अन्य सामग्री भी उच्चकोटि की है। बधाई!!

उषा राजे सक्सेना, यू.के.

सुधा बहन, 'हिंदी चेतना' का अंक पाकर बहुत प्रसन्नता हुई। हिंदी चेतना के वैविध्य ने विशेष रूप से आकर्षित किया। विभिन्न रुचियों के पाठकों के लिए इसमें स्तरीय और रोचक सामग्री जुटाई गई है, इसे मैं पत्रिका की विशेष उपलब्धि मानता हूँ। गर्भनाल में आपकी लेखनी का जादू देखता आ रहा हूँ, और अब आपसे संपर्क करने का भी अवसर मिला है। विदेश में रहकर आप हिंदी की जो सेवा कर रही हैं और पत्रिका के माध्यम से अन्य लोगों को भी हिंदी की सेवा करने/हिंदी से जुड़े रहने के अवसर प्रदान कर रही हैं, उसके लिए मैं आपका एवं सभी सहयोगियों का अभिनन्दन करता हूँ। आपके प्रयास सफल हों, यही कामना है।

हार्दिक सम्मान सहित -

डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री, ऑस्ट्रेलिया

एक मित्र के बताने पर 'हिंदी चेतना' के अंक देखे। इतनी दूर रह कर भी आपलोग जो अपनी मातृभाषा की सेवा कर रहे हैं उसकी जितनी भी प्रशंसा, सराहना की जाए कम है।

गगन शर्मा, भारत

साहित्य की विभिन्न विधाओं को संजोये हिन्दी चेतना का अप्रैल -जून अंक मिला। विदेश में भी हिंदी भाषा के गौरव को बढ़ाने व उसे समेटने वाली पत्रिका! आश्चर्य व हर्ष की सीमा न रही। जिज्ञासावश शुरू से अंत तक पल में उसके पन्ने पलट डाले।

कहानी 'वो एक पल' मानव दुर्बलता का प्रतीक -- बहुत मर्मस्पर्शी है। चुम्बकीय किरणों की भांति अपनी ओर मुझे अंत तक खींचती ले गई।

'उत्तरायण' की नीमा नारी व्यथा का पुंज है - एक वाक्य यह दर्शाने को पर्याप्त है - लगता है कि हर दिन उसे एक महाभारत अपने कमज़ोर कन्धों पर ढोना है।

रिश्तों की गहराई को कहानीकार बखूबी उजागर करता है --- 'मन के रिश्ते होते ही कहाँ हैं जो शरीर के अशक्त होने पर भी जुड़े रहें।'

पिचकारियाँ, कलाई पर बंधा वक्त कविताएँ प्रशंसनीय हैं।

पत्रिका की सफलता के लिए डॉ. सुधा ओम ढींगरा, श्री श्याम त्रिपाठी व हिन्दी चेतना की पूरी टीम को बधाई।

सुधा भार्गव, बैंगलोर, भारत

Inbox में ई-मेल के माध्यम से आपकी पत्रिका से साक्षात्कार हुआ। आश्चर्य हुआ कि इतनी अच्छी पत्रिका अमरीका से प्रकाशित होती है। विदेश में हिन्दी और इसके साहित्य के प्रचार-प्रसार में इस 'हिन्दी चेतना' का कितना महत्त्वपूर्ण योगदान होगा, यह इस पत्रिका के सौष्ठवपूर्ण कलेवर और रचना-सामग्री से ही पता चलता है! 'पाती' में जो प्रतिक्रियाएं पढ़ने को मिलीं, उनसे भी विदित होता है कि अत्यंत व्यापक स्तर पर इस पत्रिका का अनुशीलन होता होगा। अन्य नेट पत्रिकाओं से तुलना करें, तो यह स्पष्ट होता है कि इसे बड़ी शिद्दत से सजाया-संवारा गया है। सभी विधाओं को तो समानजनक स्थान मिला ही है; साथ में, पुस्तक समीक्षा भी यथास्थान प्रकाशित की जा रही है। स्तरीय रचनाओं के प्रकाशन के साथ-साथ, ऐसे प्रवासी हिन्दी लेखकों से भी रू-ब-रू कराया गया है जो बेहद उम्दा लिखते हैं। खासतौर से प्रवासी हिन्दी लेखकों की रचनाशीलता से अवगत होना, एक सुखद और जिज्ञासापूर्ण अनुभव है। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि विश्व मंच पर हिन्दी का परचम फहराने में यह पत्रिका अगुवाई करे! कृपया विदेशी नस्ल के हिन्दी-प्रेमियों में भी इस पत्रिका को लोकप्रिय बनाएं तो ऐसा हिन्दी के भविष्य के लिए बड़ा अच्छा होगा। अब ज़माना बहुत बदल गया है, नेट के माध्यम से हिन्दी के विकास और उन्नयन का स्वर्णिम अवसर हाथ से नहीं जाना चाहिए। मेरा सुझाव है कि पत्रिका में ऐसी ही रचनाएं प्रकाशित की जाएं, जो मूल रूप से हिन्दी की आत्मा को बिम्बित करे! हिन्दी भाषा और उसका साहित्य राष्ट्रीय संस्कृति को व्याख्यायित करेगा। पहले भी, विदेशों में भारतीय दर्शन को बड़े फलक पर अपनाया और सराहा गया है। अमरीका को ही लीजिए, वहां उन्नीसवीं सदी में, कुमार स्वामी, अरबिंदो घोष, स्वामी विवेकानंद जैसे भारतीय दार्शनिकों ने अमरीकी जीवन-पद्धति को गहनता से प्रभावित किया था। एमरसन, एडगर एलन पो, वाल्ट व्हिटमैन, हाथर्न, यूजीन ओ' नील, टेनीसी विलियम, टी.एस. इलियट आदि जैसे साहित्यकारों ने भारतीय दर्शन के प्रति अपना रुझान दिखाया है। इंग्लैण्ड के वर्डवर्थ, कालेरिज, शेली, कीटस, मैथ्यू आर्नाल्ड, विलियम बटलर यीटस जैसे अंग्रेज़ी के साहित्यकार भारतीय दर्शन में पूर्णरूपेण निष्णात थे। बल्कि, यूं कहना चाहिए कि उन्होंने अपने साहित्य के भाव-पक्ष को भारतीय जीवन-दर्शन को आत्मसात करके ही इतना अधिक समृद्धि बनाया। अन्यथा, उनका साहित्य इतना गहन नहीं हो पाता। बहरहाल, 'हिन्दी चेतना' जैसी पत्रिकाएँ भारतीय समाज की विचारधाराओं को विश्व में सुस्थापित करके वैश्विक जन-जीवन को उदात्त बनाएंगीं।

शुभकामनाओं के साथ,
डॉ. मनोज श्रीवास्तव, भारत

"हिन्दी चेतना' पत्रिका देखी। भारत से दूर रह कर भी हिन्दी भाषा के लिए किया जा रहा आप का यह प्रयास सराहनीय है। आप के इस अनुष्ठान में मैं भी थोड़ी सी सहभागिता चाहता हूँ।

रामकुमार वर्मा
राज्य सचिव,
छत्तीसगढ़ हिन्दी साहित्य परिषद्

I've read your book Hindi Chetna 2011. It is heart touching. Before it, I never read such type of lit*Hindi book* I'd like to give you so many greetings for providing this online great literature.

Dr. Lalit Tasleem, New Delhi

यह बुक फार्मेट वाला प्रयोग तो बहुत ही बढ़िया लगा। आनन्द आ गया। आलेख का प्रस्तुतिकरण और उसके साथ लगे दोनों चित्र आलेख को बेहतरीन बना रहे हैं। साहित्य समाचार में छपी देख लूँ तो चलूँ की विमोचन रिपोर्ट देखकर मन हर्षित हुआ। आपका बहुत आभार, अब बाकी की सामग्री पढ़ी जा रही है। सुन्दर एवं सफल प्रयास इस अंक का।

बहुत बधाई,
समीर लाल, कैनेडा

सुधा जी, हिन्दी चेतना का अप्रैल अंक मिला। सुदर्शन प्रियदर्शिनी जी की कहानी उत्तरायण के लिए आपको और लेखिका को बहुत-बहुत बधाई। कहानी के शिल्प में गठन, भाषा में परिपक्वता तो है ही, इससे भी अधिक प्रशंसनीय है भावों की गहनता। कहानी केवल सतही स्तर पर ही नहीं चलती बल्कि लेखिका जिस तरह कथानक के भीतर जाकर संवेदनाओं को खोजती है और उसे पाठकों तक पहुंचाने में भी सफ़ल होती है, वही कहानी की भी सफ़लता है। आशा है हमें आप भविष्य में भी इस तरह की कहानियां देती रहेंगी।

शुभकामनाओं के साथ,
अनिल प्रभा कुमार, अमेरिका

सम्पादकीय में जिस ओर इशारा किया गया है, उसे विड़म्बना ही कहा जाएगा क्योंकि साहित्यकारों को जिस प्रकार बांटा जा रहा है वह विचारणीय है। भारत में ही उत्तर और दक्षिण की रेखा खींची जाती है तो वैश्विक स्तर पर भारतीय और विदेशी की! साहित्य के इतिहास में भी इस रेखा को भली-भांति देखा

जा सकता है। और, आकांक्षा यह की जाती है कि हिंदी अंतर्राष्ट्रीय स्तर की भाषा बने। हिंदी चेतना एक स्तुतीय कार्य कर रही है जो हिंदी को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाने में सहायक होगी। देश-विदेश के रचनाकारों को इस पत्रिका में स्थान दिया गया है। विदेशी साहित्यिक गतिविधियों की जानकारी दी जा रही है। एक चिंतनपरक अंक निकालने के लिए बधाई, जिसमें कहानी, कविता, लेख, व्यंग्यादि के माध्यम से मानवीय सरोकारों पर प्रकाश डाला गया है। साहित्य की रेखा पर इस अंक में अनिल प्रभा कुमार की कविता को उद्धृत करें तो-

तब भी खींच दी सीमा
अग्नि रेखा की
आदतन।।

चंद्रमौलेश्वर प्रसाद, भारत

"हिंदी चेतना' में स्वयं को प्रकाशित होना बड़ी बात है, एक अलग ही अनुभूति हासिल होती है, हमें खुशी है कि हिंदी चेतना केवल उतरी अमेरिका की ही नहीं पूरे विश्व के हिंदी भाषियों की है, ऐसा मैं मानता हूँ क्यूँ कि जो भी रचनाकार है वो विश्व में कही भी रहता हो वो 'हिंदी चेतना में स्थान पाता है' और इस अनुपम प्रयास के लिए पूरी 'हिंदी चेतना' की टीम बधाई की पात्र है। निरन्तर यूं हीं एक मुकाम हासिल करती रहे ये कामना है!

सुनील गज्जाणी, भारत

'हिंदी चेतना' का यह अंक भी सार गर्भित रचनात्मक सामग्री से भरपूर है। विश्वपटल पर हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य के लिए हिंदी चेतना का योगदान महत्वपूर्ण है, सुधा जी को हार्दिक बधाई।

सुरेश यादव, भारत

'हिन्दी चेतना' का इंतज़ार रहता है। ऑन लाइन बुक फार्मेट, हिंदी चेतना को पढ़ने में बहुत सहायक सिद्ध हो रहा है। सामग्री का चुनाव इस बार भी लाजवाब। नीना पॉल की कहानी 'वो एक पल' पढ़ी। ऐसा लगा कि तेजेन्द्र शर्मा की कहानी पढ़ रही हूँ। हाल ही में उनकी कुछ कहानियाँ पढ़ी थीं और अभी तक वे दिमाग़ पर छाई हुई हैं। हु-ब-हू कैसे एक लेखक की कहानी दूसरे लेखक से मिल सकती है। संपादक महोदया कहीं नाम लिखने में ग़लती तो नहीं हो गई। सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कहानी 'उत्तरायण' उदास कर गई। नीमा की पीड़ा दिल को बींध गई। समीर लाल अच्छा व्यंग्य लिखते हैं, विदेशों के व्यंग्यकारों में उनका नाम अग्रणी श्रेणी में है। देवेन्द्र पॉल का लेख सरकार, समाज और सीनियर सिटिज़न सच बयानी करता लेख है। कविताएँ, ग़ज़लों के साथ-साथ अधेड़ उम्र में थामी कलम के संस्मरण ने भी झंझोड़ दिया। कहीं कोई कसर रही हो तो आलोचना करूँ। अगले अंक के इंतजार में।

हरिंदर कौर सिंह, अमेरिका

एक मित्र ने 'हिन्दी चेतना' ऑन लाईन का लिंक फारवर्ड किया। पहले कुछ दिन तो उसे खोला नहीं यह सोच कर कि विदेश से क्या पत्रिका निकल रही होगी, वहाँ किसी को लिखना ही कहाँ आता है। भारत के बहुत से लेखकों की ऐसी सोच है कि प्रवासी साहित्य नास्टेल्जिक है, लोग मर्ज़ी से अपने देश को छोड़ कर गए हैं और बाहर जा कर देश के लिए आँसू बहाते हैं। इन्हीं आम धारणाओं और भ्रांतियों का शिकार मैं भी था और मैं रचनाओं को उसी नज़र से देखता व पढ़ता था। फिर एक दिन अनमने मन से भेजे गए लिंक को खोल ही लिया और स्वयं पर ताज्जुब हुआ, घंटों बैठा रहा और कई पुरानी 'हिन्दी चेतना' पढ़ डालीं। इतने पर ही रुका नहीं ऑन लाइन उन लेखकों को खोज-खोज कर पढ़ डाला। मैं हिन्दी चेतना का नियमित पाठक बन गया हूँ और अपना पता भेज रहा हूँ, प्रकाशित पत्रिका पढ़ना चाहता हूँ। ऐसी पत्रिका की सदस्यता लेना गर्व की बात है। इस अन्तरराष्ट्रीय पत्रिका को तो 'हँस' के संपादक राजेन्द्र यादव और दिल्ली के कई आलोचकों को भेजना चाहिए जो शायद प्रवासी लेखकों को पढ़े बिना आलोचना करते रहते हैं। प्रवासी साहित्य के प्रति मेरा हृदय परिवर्तन करने के लिए हिन्दी चेतना का मैं आभारी हूँ। मुख्य संपादक, संपादक व पूरी टीम को साधुवाद।

विजय प्रताप सिंह 'सरोज', भारत
Regional Manager ITCI

प्रतिष्ठित हिन्दी पत्रिका 'हिन्दी-चेतना' का अप्रैल-जून अंक पढ़ने को मिला। पृष्ठ दर पृष्ठ पलटता चला गया और अहसास हुआ कि भारत की धरती से इतनी दूर से प्रकाशित होने वाली इस पत्रिका की रचनाओं में वही खुशबू मौजूद है जो कि भारत की माटी में है। इसके लिए पूरी टीम बधाई की पात्र है। वरिष्ठ लेखकों की प्रशंसनीय रचनाओं के साथ-साथ नए लेखकों को जिस तरह प्रोत्साहन दिया जा रहा है वह कम ही पत्रिकाओं में मिलता है, ऐसा संतुलन आगामी अंकों में भी बना रहेगा ऐसा मेरा विश्वास है। चाहे नीना पॉल, शैलजा सक्सेना और सुदर्शन प्रियदर्शिनी की कहानी हों या समीर जी का व्यंग्य या फिर विभिन्न कवियों की बेहतरीन कवितायें, याकि डॉ. सुधा ओम ढींगरा जी के नवीनतम कहानी संग्रह 'कौन सी ज़मीन अपनी' की अखिलेश शुक्ल जी द्वारा की गई उत्कृष्ट समीक्षा हो। सभी एक से बढ़ कर एक रहे। हालांकि लघुकथाएं कुछ बेहतर हो सकती थीं। फिर भी कुल मिलाकर यह भी एक सफल अंक रहा।

आगामी अंकों के लिए शुभकामनाओं सहित

दीपक मशाल, यू.के.

नेट पर 'हिन्दी चेतना' पत्रिका पढ़ी। जानकर अच्छा लगा। अमेरिका एवं कैनेडा में रह रहे भारतवंशी भारत एवं हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में सक्रिय योगदान दे रहे हैं। मेरी आप सबको शुभकामनाएँ।

शरदचंद्र गौर
सौरभ भवन, पाथरगुरा,
जगदलपुर (छत्तीसगढ़)

मारीशस से आपको यह पत्र लिखते हुए मुझे ख़ुशी हो रही है। पहले बता दूँ कि मैं 'हिंदी चेतना' का पाठक हूँ और उसके प्रधान सम्पादक श्री श्याम त्रिपाठी जी से मेरा पत्र व्यवहार होता है। मुझे तो आश्चर्य होता है देखकर कि कैनेडा में हिंदी चेतना जैसी उत्कृष्ट हिंदी पत्रिका का प्रकाशन होता है। मेरे लिए यह सुखद आश्चर्य की बात है कि कैनेडा, अमेरिका में इतने सशक्त लेखक व कवि हैं। उनकी रचनाओं को पढ़ कर सहज में अंदाज़ लगाया जा सकता है। 'हिंदी चेतना' के अंक जनवरी 2011 में प्रकाशित आपका लेख 'आखिरी पन्ना' पढ़ा जिसमें आपने लिखा है कि ऐसे कई साहित्यकार हैं जो भारत जा कर सिर्फ अपनी बात करते हैं और किसी लेखक के बारे में कुछ नहीं कहते पर यहाँ मैं यह कहना चाहता हूँ कि कुछ ऐसे साहित्यकार भी हैं जो दूसरे साहित्यकारों के शुभचिंतक हैं। अनेक लेखकों की रचनाओं का संग्रह प्रकाशित करना समीचीन है ही और अपने अतिरिक्त अनेक लेखकों के सृजनात्मक लेखन से पाठकों को अवगत कराना और साहित्यकारों को प्रोत्साहित करने की प्रशंसनीय प्रवृत्ति उनमें है।

मैं भी हिंदी का एक साहित्यकार हूं। मारीशस हिंदी लेखक संघ का महामंत्री रहा और अब मान्य प्रधान हूँ। इस साल हिंदी लेखक संघ की स्थापना की 50वीं वर्ष गाँठ हम मना रहे हैं और दो हजार ग्यारह हमने हिंदी लेखक संघ का साहित्यिक वर्ष घोषित किया है। संघ द्वारा हमने साहित्य की अनेक विधाओं जैसे कविता, कहानी, लघुकथा, लोक कथा, नाटक, इतिहास, बाल कहानियों की पुस्तकें प्रकाशित की हैं। हम 'बाल सखा' शीर्षक से चौमासी बाल पत्रिका प्रकाशित करते हैं और पाक्षिक रेडियो कार्यक्रम साहित्य और संस्कृति के सन्दर्भ में प्रस्तुत करते हैं। 'बाल सखा' का विगत अंतर्राष्ट्रीय अंक था जिसमें 15 देशों के लेखकों की कहानियाँ, कविताएँ, तथा लेख छपे थे। अनेक देशों से हमें अच्छी प्रतिक्रियाएं भी मिलीं।

मेरी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिनमें 1. विदेशों में हिंदी, 2. आर्य समाज और हिंदी विश्व सन्दर्भ में दो महाग्रन्थ हैं। इनमें विश्व के 25 से अधिक देशों में हिंदी शिक्षण, पठन तथा साहित्य सर्जन की विशद रूप से चर्चा हुई है। पहली पुस्तक 2002 में छपी है। इस 'विदेश में हिंदी' पुस्तक में कुछ कमियाँ रह गईं हैं। 2002 के बाद हिंदी साहित्य के सृजन में भारी प्रगति हुई है, साहित्यिक गतिविधियों तथा कुछ अन्य देशों में हो रही हिंदी प्रचार की बातें नहीं आई हैं अब पुस्तक का अंग्रेजी संस्करण 'हिंदी वर्ल्ड ओवर' में समावेश हो रहा है। अब भी मैं अधिक से अधिक जानकारियाँ प्राप्त करने का इच्छुक हूं। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से 'अमेरिका में हिंदी' की जानकारी प्राप्त हुई है लेकिन अब भी बहुत कुछ शेष है।

इन्द्रदेव भोला इंद्रनाथ
प्रधान सम्पादक 'बाल सखा'
मान्य प्रधान, हिंदी लेखक संघ मारीशस

मैंने आपकी पत्रिका 'हिंदी चेतना' का अप्रैल-जून 2011 अंक ऑन लाइन पर पढ़ा। मुझे आपसे यह कहने में अत्यंत हर्ष हो रहा है कि विदेश में हिंदी की इस स्तर की पत्रिका को देख कर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही।मुझे विदेश में अपने प्रवासी भाई-बहनों के बीच अपनी मातृ-भाषा की लोकप्रियता देखकर बड़े गर्व की अनुभूति हो रही है। मेरे विचार से मैं ही नहीं वरन हर भारतीय आप लोगों के इस प्रशंसनीय कार्य पर आपको हार्दिक बधाई देना चाहेगा। आपका हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए किया गया सभी कार्य सराहनीय है। आपके हिंदी जगत में किये गये कार्यों के लिए जितनी भी प्रशंसा की जाए उतनी कम है। मैं आपकी इस पत्रिका को पढ़ कर इतनी प्रभावित हुई हूँ कि अति शीघ्र आपकी पत्रिका का हिस्सा बनना चाहती हूँ।

संध्या द्विवेदी
रिसर्च स्कॉलर,
सागर विश्वविद्यालय, सागर

"हिंदी चेतना' का अप्रैल अंक पढ़ा, इस अनमोल साहित्य को पढ़कर एक सुखद अनुभूति हुई।

चाहे कविता हो या लेख सब एक से बढ़कर एक थे। अभी से ही हिन्दी चेतना के अगले अंक का इंतज़ार शुरू हो गया है। पत्रिका इसी तरह से तरक्की करते रहे, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

किरन सिंह
एम्स्टरडैम, नीदरलैंड

"हिंदी चेतना' का नया अंक देखा! पढ़कर लगा जैसे भारत से आई किसी पत्रिका को पढ़ रहा हूँ!

देश की सरज़मीं से दूर रहकर भी, उसकी मिट्टी की सुगंध समेटे इस पत्रिका की बात ही निराली है!

'हिन्दी चेतना' इसी तरह से हम अप्रवासियों की चेतना को जगाती रहे इसकी कमाना करता हूँ!

आदरणीय श्याम जी को इस बहुमूल्य योगदान के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद!

अमित कुमार सिंह
एम्स्टरडैम, नीदरलैंड

पाती

हिंदी साहित्य व संस्कृति का भरपूर कलश 'हिंदी चेतना' अप्रैल 2011 अंक मिला और अभिभूत करती हुई कृतियों से रू-ब-रू कराता रहा। पहले सम्पादकीय और फिर आखरी पन्ना पड़ने की मेरी आदत-सी हो गई है, जिनमें बड़े ही सकारात्मक सन्देश और संकेत मिलते हैं। मन को छेदती रही आदरणीय श्यामजी की बात- 'हमारा सुख-चैन, दु:ख-दर्द, मातृभूमि के साथ साँझा है, लेकिन खेद की बात है कि हमारा साहित्य एक नहीं, जबकि हमारी भाषा एक है।' और माननीय सुधाजी की मनोकामना 'टीम वर्क देश की उन्नति के लिए हो तो देश का वर्तमान और भविष्य बदल जाए, पूरी हो यही प्रार्थना है हमारी। सीताराम जी का आलेख 'हम सेल्फ मेड नहीं' सोचने पर मजबूर करता है कि क्या धन दौलत ही वास्तव में हमारी विरासत है? अपना विकास अपना मनोबल करने की बजाय, शिकायत करना कहाँ तक वाजिब है? व्यंग्य लिखना टेडी खीर सा है, पर अपनी कलम की महारिता से समीर लाल जी का लिखा 'आप जलूल आना, चोनू' बहुत अच्छा लगा। निर्मल गुप्त की सिलसिलेवार कविता 'संवादों का पुल' एक दस्तावेज़ रचना है जो एक सकारात्मक सन्देश देने से नहीं चूकती। 'कागज़ पर अंकित शब्द बन जाते हैं इतिहास..!'

सुदर्शन प्रिदार्शिनी की कहानी 'उत्तरायण' अपनी पैनी भाषा के तेवरों से पाठक को खुद-ब-खुद जोड़ लेती है और किसका नाम लूं और किसका न लूं यह तय करना मुश्किल है। सभी रचनायें किसी न किसी मुद्दे को सामने ला रही हैं। लेखक की अगर अंगूठे जितनी तस्वीर रचना के साथ लग जाए तो पाठक के साथ उनका एक संगमय नाता जुड़ जाने की सम्भावना है।

साधुवाद एवं शुभकामनाएं
देवी नागरानी, अमेरिका

PRIYAS
DENISON CENTRE

1661 DENISON STREET
UNIT T-15
MARKHAM, ONTARIO
L3R6E4

TEL. : 905-944-1229, FAX : 905-944-9600

वानप्रस्थ आश्रम नवजीवन में प्रवेश है

◆ प्रदीप कुमार, कैनेडा

भारतीय दर्शन में जीवन को चार आश्रमों में बांटा गया है। उनमें से पहला है ब्रह्मचर्य आश्रम यानी कि शिक्षा प्राप्त करने का समय जो जीवन के प्रथम पच्चीस वर्षों में पूरा होता है। दूसरा आश्रम है ग्रहस्थ जीवन का – पच्चीस से पचास वर्ष की आयु तक जिसमें व्यक्ति पारिवारिक जीवन व्यतीत कर धन, संपत्ति और सामाजिक प्रतिष्ठा अर्जित करता है। तीसरा आश्रम वानप्रस्थ है जो पचास से पिछत्तर की आयु के बीच घटित होता है। जिसके विषय में विस्तृत रूप से चर्चा होगी। अंतिम सन्यास आश्रम है जिसमें व्यक्ति ईश्वरधर्मी होकर सहजता से मृत्यु में प्रवेश कर उस अनन्ता में विलीन हो जाता है जिससे उसका उदय हुआ था। वानप्रस्थ का अर्थ है वन यानि जंगल की ओर प्रस्थान। किन्तु यहां 'वन' शब्द सांकेतिक और प्रतीकात्मक है। वन का अर्थ समझने के लिए हमें उपवन यानि बाग का अर्थ समझना होगा। उपवन मानव निर्मित, नियंत्रित, छोटा और ज्ञात उद्यान होता है। किन्तु वन, प्राकृतिक, अज्ञात, रहस्यमय और अनजानी घटनाओं की सम्भावनाओं से भरा होता है। इस दृष्टिकोण से गृहस्थ आश्रम उपवन है और वानप्रस्थ अज्ञात की अनुभूति के लिए एक विराट वन। वानप्रस्थ आश्रम में अज्ञात की अनुभूति दो स्तरों पर होती है। प्रथम स्थूल रूप में जब व्यक्ति जाने पहचाने क्षेत्र, नगर और देश को छोड़कर अनजाने परिवेश और तीर्थ–स्थलों की यात्रा पर निकल पड़ता है। सामान्य भ्रमण से व्यक्ति को सुख मिलता है किन्तु तीर्थ यात्रा उसे नवीन अंतर दृष्टि देती है। इसका कारण है तीर्थ यात्रा के कष्टमय अनुभव से तन–मन की पुरानी परिभाषाएं और विचार चक्र टूटते हैं जिससे नवीनता का अनुभव होता है। व्यक्ति को अहसास होने लगता है कि उसके धर्म और संस्कृति की तरह अनेकों धर्म और संस्कृतियाँ हैं जो उतनी ही सक्षम और मूल्यवान हैं जितनी कि उसकी। यह अनुभव मन में विषादता लाता है।

वानप्रस्थ का दूसरा आयाम और भी गहरा है जिसमें व्यक्ति आत्मा के घने और अज्ञात वन में प्रवेश करता है। ब्रह्मचर्य और गृहस्थ आश्रम जीने के बाद व्यक्ति के मन में अवसाद, ग्लानि, क्रोध और घृणा से भरी अनेकों स्मृतियाँ एकत्रित हो जाती हैं जो उसके मस्तिष्क में परजीवी की तरह बैठकर दुःख का और भी जटिल जाला बुन देती हैं। मस्तिष्क मन की कड़वी स्मृतियों के बंदीगृह में कैद होकर जर्जर और वृद्ध हो जाता है। यह तथ्य है कि यदि मस्तिष्क अपनी प्राकृतिक स्वछंदता से रहे तो वह 100 वर्षों से भी ज्यादा ऊर्जावान और चेतन बना रहेगा। किन्तु भययुक्त और दुखित मन की छाया उसे समय से पहले ही जर्जर कर देती है।

किन्तु वानप्रस्थ आश्रम जीवन का वह समय है जब चिन्तन, मनन और ध्यान की शक्ति से मन के बंदीगृह को तोड़कर मस्तिष्क को मुक्त किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में देह और मस्तिष्क की सुप्त ऊर्जा जागृत होकर अस्तित्व को तेजस और निर्मल चेतना से भर देती है जो नवजीवन की अनुभूति है। उसके बाद भले ही शरीर वृद्ध हो जाय किन्तु मस्तिष्क और मन सदा तरुण रहते हैं।

यही उद्देश्य है वानप्रस्थ का जिसमें व्यक्ति का आत्मा में पुनर्जन्म होता है। आत्म अनुभूति की वह अवस्था है जिससे व्यक्ति की चेतना का मृत्यु में प्रवेश सहजता और अभयता से होता है। मन और आत्मा की इस अवस्था को संस्कृत के तीन शब्दों 'सत–चित्त–आनन्द' में पूर्णता के साथ व्यक्त किया है जिसका अर्थ है –अस्तित्व–पूर्ण जीवन चेतना का आनन्द है।

Beacon Signs
1985 Inc.

7040 Torbram Rd. Unit # 4, Mississauga, ONT. L4T 3Z4

Specializing In:

Illuminated Signs awning & pylons

Channel & Neon letters

Banners

Architectural signs

VEHICLE GRAPHICS

Engraving

Silk screen

Silk screen

Design Services

Precision CNC cutout plastic, wood & metal letters & logos

Large format full Colour imaging System

SALES – SERVICE - RENTALS

Manjit Dubey

दुबे परिवार की ओर से हिन्दी चेतना को बहुत बहुत शुभकामनायें

Tel: (905) 678-2859 Fax: (905) 678-1271

E-mail: beaconsigns@bellnet.ca

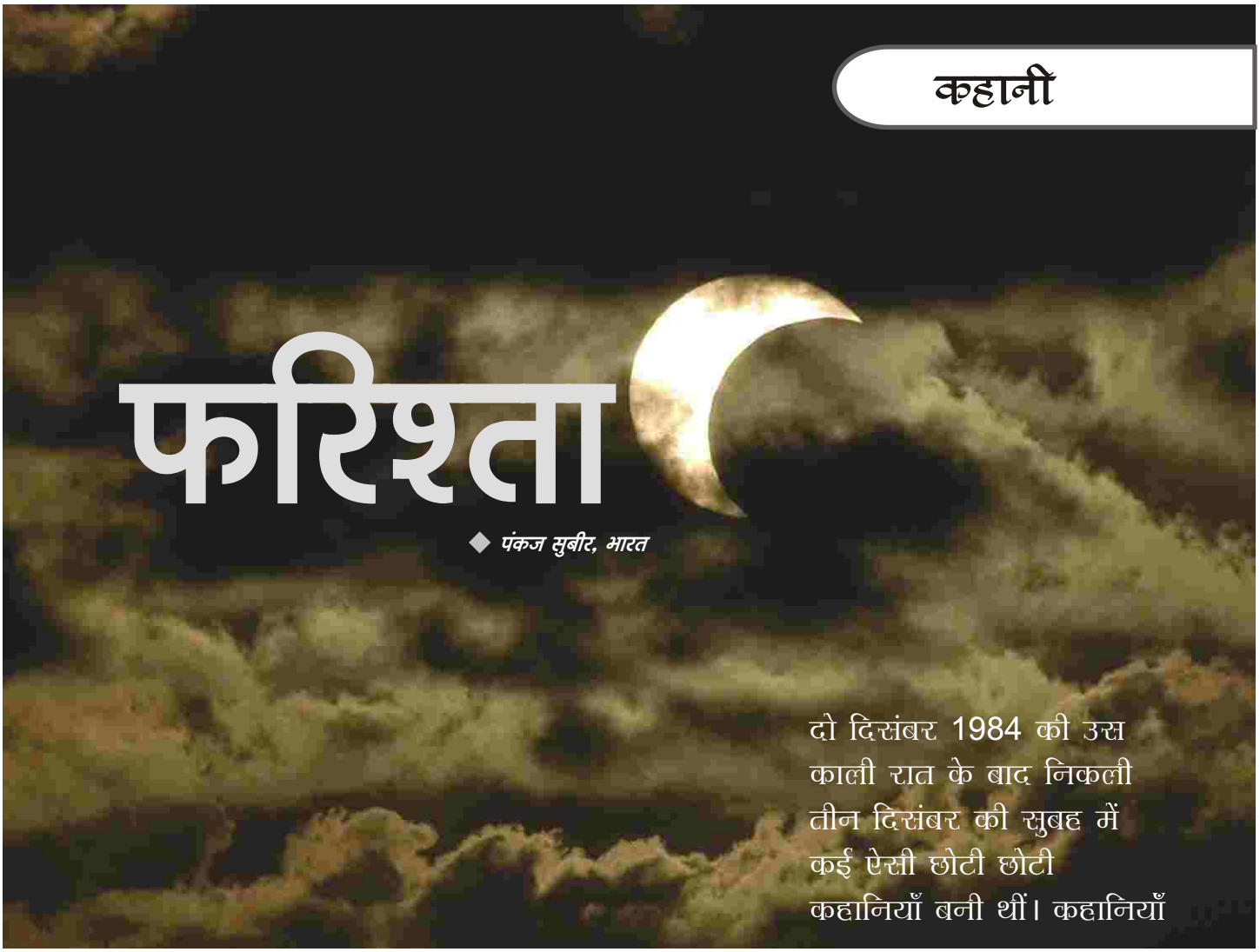

फरिश्ता

◆ पंकज सुबीर, भारत

दो दिसंबर 1984 की उस काली रात के बाद निकली तीन दिसंबर की सुबह में कई ऐसी छोटी छोटी कहानियाँ बनी थीं। कहानियाँ जो इस यक़ीन को ज़िन्दा कर गईं थीं कि हर मुश्किल दौर में, हर कठिन समय में मानवता अपने होने का एहसास किसी न किसी रूप में आकर दिला जाती है। ताकि उम्मीद की उस एक किरण को देख कर, आशा की एक डोर को थाम कर लोग घटाटोप में ज़िन्दा रहने का हौसला जुटा सकें, ज़िन्दा रह सकें।

क्या ये किसी दूसरे ग्रह से आये लोग हैं? बस स्टैंड पर उतरते ही उसके अंदर से आवाज़ आई। पूरा बस स्टैंड इसी प्रकार के लोगों से भरा हुआ था। ये प्रदेश की राजधानी भोपाल से मात्र चालीस किलोमीटर पर स्थित जिला मुख्यालय सीहोर का बस स्टैंड था। सीहोर जहां के कॉलेज में उसने एडमीशन ले रखा था और नज़दीक के छोटे से क़स्बे इछावर से रोज़ अपडाउन करता था। ये तब की बात है जब सूचनाएँ इतनी तेज़ी के साथ नहीं फैलती थीं जितनी आज फैलती हैं। टी.वी. तब तक नहीं के बराबर ही आया था। उस छोटे से क़स्बे इछावर के एक दो घरों में ही टी.वी. था जो रात के दो घंटे के कार्यक्रम देकर बंद हो जाता था। मोबाइल को तो छोड़ो तब तो टेलीफोन तक घर-घर में नहीं था। शाम को सात बजे भोपाल से आख़िरी बस आती थी और उसके बाद भोपाल कट जाता था बाहरी दुनिया से। हालांकि बात केवल छब्बीस साल पहले की है फिर भी शायद नई पीढ़ी इस बात पर यकीन न करे कि उस समय क़स्बे में वाहन के नाम पर एक फिएट कार, दो राजदूत मोटर साइकिल तथा आठ स्कूटर थे। समय कितनी जल्दी सब कुछ बदल देता है। आज उस क़स्बे में पचास कारें और दो तीन सौ मोटर साइकिलें हैं। टी.वी., मोबाइल और कम्प्यूटर जैसी चीज़ें की कौन बात करे जो अब मानव शरीर का अंग ही माने जाते हैं।

BEST WAY CARPET & RUGS INC.

$50.00 Off All wall to wall Carpet with purchase up to 300 sq. ft.
10% Off all Area Rugs

Free delivery under pad Installation

• Residential • Commercial • Industrial • Motels & Restaurants

Free Shop at Home Service Call: (416) 748-6248

• Broadloom • Area Rugs • Runners • Vinyl & Hardwood • Blinds & Venetian
Custom Rugs • All kind of Vacuums

Interest Free 6 months No Payment OAC

7003, Steeles Ave. Unit 8
Etobicoke
ON M9W OA2
Ph: 416-748-6248
Fax: 416-748-6249

1 Select Ave, Unit 1
Scarborough
ON M1V 5J3
Ph: 416-321-6248
Fax: 416-321-0929

अल सुबह जब वो इछावर से सीहोर की बस पकड़ कर चला था तो कुछ नहीं पता था कि केवल साठ किलोमीटर दूर स्थित भोपाल में क्या घट चुका है। आज विश्व के किसी भी कोने में घटित हुई किसी महत्वपूर्ण घटना को यदि विश्व भर में प्रसारित होने में पाँच मिनिट से अधिक का समय लग जाये तो समाचार बासी हो गया माना जाता है। इधर बोर में बच्चा गिरता है और उधर सीधा प्रसारण भी शुरू हो जाता है। इससे अलग वो समय जब सूचनाएँ बहुत धीरे-धीरे चलती थीं, छोटे क़स्बों तक ही अगले दिन तक पहुँचती थीं तो गाँवों तक कब पहुँचती होंगीं अंदाज़ लगाया जा सकता है।

सीहोर का पूरा बस स्टैंड बदहवास लोगों से भरा था। लोग जो एलियन की तरह इस कारण नज़र आ रहे थे कि उनकी आँखें बिल्कुल वैसी ही नज़र आ रही थीं। सूज कर फूल कर आँखों के कोटरों से पुतलियाँ टेबल टेनिस की गेंद की तरह बाहर आई हुई थीं। गाड़ियों पर गाड़ियाँ चली आ रही थीं। जिस गाड़ी की क्षमता पचास सवारियों की थी उसमें सौ सवा सौ भरे हुए चले आ रहे थे। ये मंज़र देखा तो हैरत में पड़ गया वो।

'आज तो छुट्टी हो गई है कॉलेज की।' उसकी पीठ पर धौल के साथ आवाज़ आई तो उसने मुड़ कर देखा। पीछे शेखर था।

'यार ये हुआ क्या है इन लोगों को?' उसने पूछा।

'तुझे नहीं पता? भोपाल में कुछ हो गया है। क्या हो गया है ये तो पक्का पता नहीं चल रहा है, लेकिन सब कह रहे हैं कि कोई गैस वैस निकली है।' शेखर ने कुछ लापरवाही स्वर में कहा।

'गैस...? गैस निकलने से इतना कैसे हो सकता है?' उसकी कल्पना में गैस का मतलब रसोई गैस ही था।

'पता नहीं बता रहे हैं कि किसी फैक्ट्री से निकली है, कोई ज़हरीली गैस है।' शेखर ने उत्तर दिया।

'कॉलेज तो बंद हो गया है, चल घर चल वहीं चल कर बैठते हैं।' शेखर ने फिर कहा।

'नहीं यार वापस जाऊँगा, कुछ अच्छा नहीं लग रहा है ये सब देख कर।' उसने उत्तर दिया।

सीहोर का पूरा बस स्टैंड बदहवास लोगों से भरा था। लोग जो एलियन की तरह इस कारण नज़र आ रहे थे कि उनकी आँखें बिल्कुल वैसी ही नज़र आ रही थीं। सूज कर फूल कर आँखों के कोटरों से पुतलियाँ टेबल टेनिस की गेंद की तरह बाहर आई हुई थीं। गाड़ियों पर गाड़ियाँ चली आ रही थीं। जिस गाड़ी की क्षमता पचास सवारियों की थी उसमें सौ सवा सौ भरे हुए चले आ रहे थे।

उसके उत्तर पर शेखर अपनी साइकिल उठा कर चला गया। वो इछावर जाने वाली बस के इंतज़ार में वहीं खड़ा हो गया।

'बेटा यहाँ का हस्पताल कहाँ है?' पास से किसी महिला का स्वर आने पर उसने मुड़कर देखा। एक अधेड़ उम्र की महिला अपने साथ दो लड़कियों को लेकर खड़ी थीं। पोशाक से मुस्लिम नज़र आ रही थीं मगर बुरका तो छोड़ो सर पर दुपट्टा भी नहीं तीनों के। बदहवास सी दिखाई दे रही थीं तीनों।

'हस्पताल तो थोड़ा दूर है यहाँ से, आप पहले सीहोर आईं हैं कि नहीं?' उसने पूछा।

'नहीं बेटा हम तो भोपाल आये थे रिश्तेदारी में रात को हल्ला मच गया तो इन दोनों को लेकर भागी, जो गाड़ी सामने दिखी उसी में बैठ गये। यहाँ लाकर छोड़ दिया उस गाड़ी ने। अब कहाँ जाएँ कुछ समझ में नहीं आ रहा है।' महिला के स्वर में दीनता उतर आई। साथ की दोनों लड़कियाँ सहमी हुई खड़ी थीं।

'कहाँ से आये हैं आप लोग?' उसने फिर पूछा।

'हम तो बेटा रायसेन के हैं।' महिला ने उत्तर दिया।

'चलिये मैं ले चलता हूँ आपको हस्पताल। आप नहीं पहुँच जाएँगी ख़ुद।' उसने कहा। रायसेन भी भोपाल के नज़दीक का ही एक जिला मुख्यालय है।

'तुम पर अल्लाह की मैहर हो बेटा, ख़ूब फलो

कहानी के कई सारे पक्ष पाठकों को असहज लग रहे होंगे। जैसे ये भी एक हिन्दू लड़का इस तरह किसी मुस्लिम परिवार के लिये परवाह करते हुए उनकी मदद क्यों कर रहा है? असहज लगने जैसी कोई बात इसलिये नहीं होनी चाहिये कि ये कहानी 1984 की है। 1984 जिसके पाँच साल बाद रथ यात्रा निकाली गई, आठ साल बाद विवादित ढाँचा गिराया गया और जिसके अठारह साल बाद गुजरात हुआ था। उसके पहले का भारत जिन्होंने देखा उनको ये कहानी बिल्कुल असहज नहीं लगेगी।

फूलो।' पारंपरिक मुस्लिम बुज़ुर्ग महिला की तरह महिला ने दुआओं की झड़ी लगा दी।

हस्पताल में भी बस स्टैंड के समान ही हालत थी। पूरा मैदान इसी प्रकार के लोगों से खचाखच भरा था। लेकिन दिक़्क़त ये थी कि डॉक्टरों को ख़ुद ही समझ में नहीं आ रहा था कि इलाज किस प्रकार किया जाये, क्या दवाएँ दें? अधिकतर मरीज़ों को आई ड्राप्स ही दिये जा रहे थे। कुछेक गम्भीर हालत वालों को बरामदे में लिटा कर भर्ती किया जा रहा था। बरामदा भी अब कमरों की ही तरह भर चुका था। डॉक्टर केवल गम्भीर मरीज़ों को ही देखने में जुटे थे। बाकियों को कम्पाउण्डर, वार्ड ब्वाय, तथा नर्स वग़ैरह देख रहे थे। उन तीनों को हस्पताल में एक तरफ बैठा कर वो उस भीड़ में शामिल हो गया। काफी देर की जद्दोजहद के बाद वो जब वापस लौटा तो उसके हाथ में एक आई ड्राप था।

'लीजिये अम्मा जी ये डाल लीजिये आँखों में। इससे कुछ आराम मिलेगा। वे लोग सबको यही दे रहे हैं।' उसने ड्राप बढ़ाते हुए कहा। महिला ने ड्राप लेते हुए एक बार फिर दुआओं का पिटारा खोल दिया।

'आप लोगों को और कुछ तकलीफ तो नहीं हो रही है?' उसने उन लोगों को आँखों में दवा डालते देखा तो पूछा।

'नहीं बेटा अभी तो कुछ नहीं हो रहा है, बस ये आँखें ही...' महिला ने बात बीच में ही छोड़ दी।

अचानक उसे याद आया कि उसके बैग में दोपहर के खाने का टिफिन रखा है। उसने टिफिन निकाला और उन लोगों की तरफ बढ़ाते हुए कहा 'आप लोग कुछ खा लीजिये। हालाँकि बहुत कम होगा इसमें, फिर भी आप लोग थोड़ा थोड़ा खा लीजिये, मैं पानी का इंतज़ाम करके आता हूँ।'

'अरे बेटा परेशान मत होइये, अब तो गैस छंट गई होगी, हम लोग चले जाएँगे वापस।' उस महिला ने सकुचाते हुए कहा।

'कहाँ जाएँगे? भोपाल? यहाँ लोग बात रहे हैं कि सुबह फिर से गैस निकली है, लोग फिर भाग रहे हैं वहाँ से। कोई बता रहा था कि हमीदिया अस्पताल में लाशों का ढेर लगा है।' उसने कहा।

'या मेरे मौला रहम कर, हमारे गुनाह मुआफ़ कर।' महिला का स्वर काँप रहा था।

'आप लोग खाना खा लीजिये फिर देखते हैं कि क्या करना है।' कहते हुए उसने टिफिन महिला के हाथ में थमा दिया और पानी लेने चला गया।

खाना वगैरह खाकर जब वे हस्पताल से बाहर निकले तो एक बड़ी समस्या सामने थी। समस्या थी वहाँ रायसेन में उन लोगों के परजिनों को ख़ैरियत की ख़बर पहुँचाने की। 1984 के उस दौर में एसटीडी पीसीओ बूथ जैसी सुविधाएँ भी नहीं आईं थीं।

'क्या नाम है बेटा आपका?' महिला को शायद याद आया कि उसने तो अपने मददगार का परिचय भी नहीं पूछा है।

'जी संजय शर्मा नाम है मेरा, यहीं पास में इछावर नाम का छोटा सा क़स्बा है, वहाँ से आता हूँ कॉलेज में पढ़ने के लिये।' उसने उत्तर दिया।

'ख़ुदा तुमको बहुत बड़ा आदमी बनाए बेटा। आज हमारे लिये तुमने ख़ूब परेशानी उठाई है।' महिला ने फिर दुआएँ दीं।

'अरे नहीं अम्मा जी, परेशानी काहे की? यहाँ परदेस में आप परेशान थीं, मेरी जगह कोई भी होता तो ये ही करता।' उसने कहा।

कहानी के कई सारे पक्ष पाठकों को असहज लग रहे होंगे। जैसे ये भी एक हिन्दू लड़का इस तरह किसी मुस्लिम परिवार के लिये परवाह करते हुए उनकी मदद क्यों कर रहा है? असहज लगने जैसी कोई बात इसलिये नहीं होनी चाहिये कि ये कहानी 1984 की है। 1984 जिसके पाँच साल बाद रथ यात्रा निकाली गई, आठ साल बाद विवादित ढाँचा गिराया गया और जिसके अठारह साल बाद गुजरात हुआ था। उसके पहले का भारत जिन्होंने देखा उनको ये कहानी बिल्कुल असहज नहीं लगेगी।

सारा रास्ता बदहवास लोगों से पटा हुआ था। भोपाल से भागे हुए लोग आसपास के शहरों सीहोर, विदिशा, होशंगाबाद, रायसेन में पहुँच रहे थे। अब तक उसे पता चल गया था कि भोपाल में यूनियन कार्बाइड नाम की फैक्ट्री से गैस निकली है। हज़ारों लोग मर चुके हैं और अभी भी रह रह कर अफ़वाह फैल रही है गैस निकलने की। इन अफ़वाहों के कारण भोपाल छोड़कर भागने वालों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। रात को जब गैस निकली तो जो जिस हालत में था उस हालत में ही उठ कर भागा है, सामने जो वाहन मिला उसी में बैठकर चल पड़ा। सीहोर की सड़कें इन बदहवास लोगों से पटी हुईं हैं। इनके चेहरों पर अभी भी मौत का ख़ौफ़ है। इस प्रकार चल रहे हैं मानो मौत

अभी भी इनके पीछे लगी हुई है।

यूनियन कार्बाइड की उस फैक्ट्री को उसने कई बार देखा है भोपाल से बैरसिया आते जाते समय। बैरसिया उसका ननिहाल है। उस फैक्ट्री के आसपास इतनी घनी आबादी है कि गाड़ियाँ निकालना मुश्किल हो जाता है। सुन ये रहे हैं कि फैक्ट्री के आसपास की पूरी आबादी को लील गई है ये गैस। ये जो बच कर आ रहे हैं ये तो फैक्ट्री से दूर रहने वाले लोग हैं। अगर सबको लील गई है तो कितनी होगी संख्या? दस हज़ार, बीस हज़ार...? उफ़्फ़।

'आपके पति क्या करते हैं?' उसने मुख्य सड़क पर आकर पूछा।

'वहाँ डाकखाने में मुलाज़िम हैं। क्लर्क हैं वहाँ पर।' महिला ने उत्तर दिया।

'क्या नाम है उनका?' उसने फिर पूछा।

'वैसे तो ज़फ़र खान नाम है पर सब लोग ख़ान बाबू के नाम से जानते हैं उनको।' महिला ने उत्तर दिया।

पोस्ट ऑफिस सुनकर उसे लगा कि संपर्क का एक सूत्र तो है ही सही। उसके क़दम सिटी पोस्ट ऑफिस की तरफ मुड़ गये। पोस्ट आफिस में भी वही अफ़रा तफ़री का माहौल था। कोई कुछ सुनने को तैयार नहीं था। हर किसी की ज़ुबान पर एक ही नाम था 'भोपाल'।

कुछ देर तक तो वो लोग परेशान होते रहे, फिर कुछ सोचकर वो उन लोगों को लेकर पोस्ट मास्टर के चैंबर में चला गया। अधेड़ उम्र के पोस्ट मास्टर ने जब पूरी बात सुनी तो तुरंत रायसेन पोस्ट ऑफिस का नंबर लगाने लगे। मगर नंबर मिलना भी एक दुश्वार काम था। काफी देर तक नंबर नहीं मिला तो पोस्ट मास्टर ने एक टेलीग्राम रायसेन पोस्ट ऑफिस के पोस्ट मास्टर के नाम करवा दिया जिसमें ज़फ़र ख़ान के परिवार के सही सलामत सीहोर के पोस्ट ऑफिस में होने की सूचना थी।

कुछ देर बाद उस तरफ से टेलीग्राम आ गया कि ज़फ़र ख़ान इधर से निकल चुके हैं, उनके परिवार को पोस्ट ऑफिस में ही बिठाया जाये।

पोस्ट मास्टर ने वहीं पोस्ट ऑफिस के एक कमरे में उन लोगों के बैठने की व्यवस्था कर दी। एक चपरासी आकर कोने में डाक छँटाई के काम में लगने वाली दरी बिछा गया और कुछ कुर्सियाँ रख गया।

'बेटा आपके घर वाले चिंता कर रहे होंगे, अब आप जाओ।' महिला ने विनम्रता से कहा।

'नहीं अम्मा जी, ख़ान साहब आ जाएँ फिर चला जाऊँगा। वैसे भी मैं कॉलेज से घर शाम तक ही पहुँचता हूँ, घर वाले चिंता नहीं करेंगे।' उसने कहा।

'जीते रहिये बेटा जी, अल्लाह ख़ूब नेमतें बरसाए आप पर।' कहते हुए महिला दरी पर अधलेटी अवस्था में हो गई।

'आप लेट जाइये अम्मा जी, मेरे पास एक शॉल है वो ओढ़ लीजिये। अपडाउन करता हूँ ना तो ठंड के मौसम में सब सामान बेग में ही रख कर चलता हूँ।' कहते हुए उसने बैग से सामान शॉल निकाल कर उन्हें दे दिया। महिला शॉल ओढ़कर हाथ का सिरहाना बनाकर उसकी ओर मुँह करके लेट गईं। दोनों लड़कियाँ दीवार से टिक कर बैठ गईं।

'कौन सी क्लास में पढ़ते हो बेटा?' महिला ने पूछा।

'जी बी.एससी. फाइनल में हूँ।' उसने उत्तर दिया।

'मेरा फरिश्ता भी आज बी.एससी. फाइनल में ही होता।' कहते हुए महिला की आवाज़ भर्रा गई। दोनों लड़कियाँ सर झुकाए बैठी थीं।

'तुम्हारी ही तरह कॉलेज में पढ़ता था वो भी, मगर पिछले साल अचानक...' कहते हुए महिला सुबकने लगीं।

'अम्मी पूरा साल तो हो गया आपको रोते हुए, अभी तो मत रोइये, वैसे ही आँखों में...' उन दोनों लड़कियों में से एक पहली बार कुछ बोली।

उसने अनुमान लगा लिया था कि फरिश्ता महिला के बेटे का नाम है जो पिछले साल गुज़र चुका है। क्या हुआ था, कैसे हुआ था, ये पूछ कर वो इन लोगों के ज़ख्मों को और कुरेदना नहीं चाहता था इसलिये ख़ामोश ही रहा।

दोपहर को जाकर वो खाना ले आया था पास के एक भोजनालय से। अब तक गैस पीड़ितों की भीड़ थोड़ी कम हो चुकी थी। वहीं उसे पता चला कि पन्द्रह हज़ार से भी ज्यादा लोग मर चुके हैं भोपाल में और ये सिलसिला अभी तक जारी है। पन्द्रह हज़ार मौतें...! एक बारगी काँप कर रह गया था वो।

चारों ने एक साथ बैठकर खाना खाया। उसी दौरान उसे बातों-बातों में पता चला कि उन दोनों लड़कियों में एक का नाम हिना और दूसरी का सबा है। दोनों स्कूल में पढ़ती हैं। फरिश्ता इनका भाई था, जो पिछले साल नहीं रहा।

धीरे-धीरे दोपहर ढल रही है। सर्दियों में वैसे भी शाम जल्द हो जाती है। निश्चिंतता बस ये थी

कि इन लोगों को लेने कोई आ रहा है, ये सूचना पास थी। महिला को नींद आ चुकी थी, जबकि सबा और हिना पहले की तरह ही दीवार से टिक कर धीरे-धीरे बातें कर रहीं थीं। अचानक पोस्ट मास्टर के साथ एक व्यक्ति ने कमरे में प्रवेश किया, जिसे देखते ही दोनों लड़कियाँ चीख पड़ीं 'अब्बू'। दोनों उठकर दौड़ीं और उस व्यक्ति के सीने से लग गईं। तीनों रो रहे थे। शोर सुनकर महिला की नींद खुल गई, उन्होंने जब दृश्य देखा तो उठ बैठीं और शॉल को दुपट्टे की तरह लपेट कर सर पर ओढ़ कर अपने पति के पास आ गईं। शॉल को मुँह पर रखकर सुबकने लगीं।

'बस करो, ख़ुदा ने बड़ी मेहरबानी की है मुझ पर कि तुम तीनों सही सलामत हो।' ज़फ़र ख़ान ने आँसू पोंछते हुए कहा।

'अब्बू अगर ये भाई जान नहीं होते तो हमारा जाने क्या होता, ये सुबह से ही हमारे साथ हैं। ये ही हमको हस्पताल लेकर गये, फिर यहाँ लाये। सुबह से ही भाग दौड़ कर रहे हैं ये हमारे लिये।' हिना ने उसकी तरफ़ इशारा करते हुए अपने अब्बू से कहा।

'बेटा मैं...' ज़फ़र ख़ान ने उसका हाथ अपने हाथों में ले लिया और उनकी आवाज़ भर्रा गई। आँखों से शुकराने के आँसू बह निकले। उसका हाथ हाथों में लेकर वे थपथपाने लगे।

'क्या नाम है बेटा आपका?' अपने को सँभालते हुए पूछा ज़फ़र ख़ान ने।

वो कुछ जवाब देने ही वाला था कि पास में सुबक रहीं महिला बोल पड़ीं 'फरिश्ता... फरिश्ता नाम है इसका। अल्लाह ने इस फरिश्ते को भेजा था आज हमारी मदद के लिये। ये नहीं होता तो आज जाने क्या होता। ये फरिश्ता है, मेरा फरिश्ता।' कहते हुए महिला ने उसे खींच कर अपने सीने से लगा लिया और ज़ार-ज़ार रो पड़ीं। ज़फ़र ख़ान ने अपना हाथ उसके सर पर रख दिया और सुबकते हुए थपथपाने लगे। हिना और सबा भी फूट-फूट कर रो रहीं थीं।

तीन दिसंबर 1984 का वो दिन इतिहास के पन्नों में एक काले दिन के रूप में लिखा जा चुका था। जब किसी दुर्घटना से, किसी मानवीय भूल से या शायद किसी साज़िश के तहत किये गये परीक्षण में बीस हज़ार लोगों की जानें उसी समय चली गई थीं और तब से लेकर आज तक बीस हज़ार और लोग अपनी जान गँवा चुके हैं। दो और तीन दिसंबर की दरमियानी रात चालीस हज़ार लोगों को अब तक लील चुकी है। लेकिन किसी को नहीं पता कि दो दिसंबर 1984 की उस काली रात के बाद निकली तीन दिसंबर की सुबह में कई ऐसी छोटी छोटी कहानियाँ बनी थीं। कहानियाँ जो इस यक़ीन को ज़िन्दा कर गईं थीं कि हर मुश्किल दौर में, हर कठिन समय में मानवता अपने होने का एहसास किसी न किसी रूप में आकर दिला जाती है। ताकि उम्मीद की उस एक किरण को देख कर, आशा की एक डोर को थाम कर लोग घटाटोप में ज़िन्दा रहने का हौसला जुटा सकें, ज़िन्दा रह सकें। ◆

कच्चा गोश्त

✍ *ज़कीया ज़ुबैरी, यू.के.*

बित्ते भर का क़द और दस गिरह लम्बी ज़बान! और जब यह ज़बान कतरनी की भांति चलती तो बृज बिहारी बहादुर भी बगलें झांकते दिखाई देते। भिड़ के छत्ते को छेड़ने से पहले सोचना चाहिए था न कि पंचायत के सरपंच बने बैठे हैं। और दबदबा ऐसा कि परिंदा भी पर मारते डरे।

फिर मदन मोहन बेचारे की क्या मजाल कि उनकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ पलक भी झपकाए। सब्बो तो बालिश्त भर की तत्तैया बनी हर समय भिनभिनाती फिरती और जहां होता बैठ कर डंक मार कर उड़ जाती।

मदन मोहन चार बहनों पर एक भाई। ऊपर वाले ने मिज़ाज और ज़हन भी ख़ूब दिया था। अभी स्कूल में ही था कि सरपंच बहादुर ने होनहार बिरवा के चिकने पात भांप लिए थे और उसकी मां से कह कर उसको घर पर बुलाना शुरू कर दिया था। घर के छोटे छोटे कामों के साथ साथ कुछ लिखत-पढ़त के काम भी करवा लिया करते थे।

> मदन मोहन के मन में कभी-कभी यह सवाल भी सिर उठाता कि पिता जी वापिस क्यों नहीं आ जाते? अगर वे आ जाते तो सरपंच जी का काम संभाल लेते और वह तसल्ली से पढ़ाई कर पाता। उसे पढ़ने का बहुत शौक़था मगर बृज बिहारी इस बात का ख़्याल रखता था कि कोई इतना न पढ़ जाए कि उसके सामने वह स्वयं अनपढ़ लगने लगे।

शुरू-शुरू में तो मदन मोहन को भी भला मालूम होता। काम कम था और खाना अच्छा मिलता था, मगर कुछ ही दिनों में उसका हाल भी एक स्विस चाकू जैसा हो गया। स्विस चाकू की ख़ूबी भी ऐसी ही होती है कि कहने को तो चाकू होता है मगर खोलिए तो उसमें दसियो काम करने के पुर्ज़े निकल आते हैं- कैंची, स्टेपलर, इंच-टेप, नाख़ून घिसने की रेती और टूथ पिक आदि-आदि। इसी तरह बेचारा मदन मोहन इस छोटी आयु से ही स्विस चाकू बन गया था।

उसके कामों में शामिल था बृज बिहारी के मोटे बदन को दबाना, मालिश करना, कपड़े

सरपंच ने गांव के भोले भाले वासियों के मन में एक अजब-सा डर बैठा रखा था कि जिसके मन में जो भी विचार उठता है वह सरपंच की पोथी में पहले से ही लिखा होता है। हर गांववासी सरपंच को भगवान का स्वरूप ही मानता। इसीलिये कई बार चाहते हुए भी बेचारे गांव वाले बृज बिहारी के विरुद्ध कभी एक लफ़्ज़ भी नहीं निकाल पाते।

धोना, इस्त्री करना, खाना खिलाना, नहाते वक़्त पीठ से मल-मल कर मैल छुड़ाना, साइकिल और इक्के पर बैठा कर घुमाने और सैर को ले जाना, लिखाई-पढ़ाई का काम करना, हिसाब-किताब दिखाना, रोज़ सुबह अख़बार पढ़कर सुनाना और ख़बरों की ऊंच-नीच समझाना।

बृज बिहारी बैठक में आते तो अख़बार मुंह के सामने ऐसा ताने बैठे रहते जैसे पूरा अख़बार आज ही चाट डालेंगे। या फिर हो सकता है कि अपनी प्रजा से मुंह छिपाने का ही कोई तरीक़ा हो। गांव वालों पर शेख़ी बघारते की पूरा अख़बार पढ़ कर पूरी दुनिया की ख़बर रखता हूं और गांव वालों के सामने पूरे रौब से पूछते, 'मदन मोहन, तुझे पढ़ना लिखना किसने सिखाया?' "

मदन मोहन बेचारा अपनी गम्भीर दबी आवाज़ में तोते की तरह रटे हुए अंदाज़ में जवाब देता, 'सरपंच जी आपने। आपने ही लिखना-पढ़ना सिखाया है।'

यह जवाब देकर पैर के अंगूठे से ज़मीन पर लिखने लगता और सोचता कि मैं कॉलिज में पढ़ रहा हूं या फिर सरपंच जी से? फिर अपने आप को समझाते हुए सोचता कि किताबी शिक्षा से कहीं बढ़ कर होती है अमली तालीम।

बस इतना सोच कर ही मदन मोहन कांप-कांप जाता कि कहीं बृज बिहारी उसके विचारों को ताड़ न जाएं। सरपंच ने गांव के भोले भाले वासियों के मन में एक अजब-सा डर बैठा रखा था कि जिसके मन में जो भी विचार उठता है वह सरपंच की पोथी में पहले से ही लिखा होता है। हर गांववासी सरपंच को भगवान का स्वरूप ही मानता। इसीलिये कई बार चाहते हुए भी बेचारे गांव वाले बृज बिहारी के विरुद्ध कभी एक लफ़्ज़ भी नहीं निकाल पाते। वैसे सच यह भी है कि जिस किसी ने सरपंच के विरुद्ध कुछ भी बोला, उस पर अचानक कुछ ऐसा घटित हो जाता कि वह अचानक लापता हो जाता और कुछ ही दिनों में लोग उसे भूल भी जाते। गांव वालों के डर का आनंद बृज बिहारी मंद-मंद मुस्कुरा कर उठाता।

मदन मोहन के मन में कभी-कभी यह सवाल भी सिर उठाता कि पिता जी वापिस क्यों नहीं आ जाते? अगर वे आ जाते तो सरपंच जी का काम संभाल लेते और वह तसल्ली से पढ़ाई कर पाता। उसे पढ़ने का बहुत शौक़ था मगर बृज बिहारी इस बात का ख़्याल रखता था कि कोई इतना न पढ़ जाए कि उसके सामने वह स्वयं अनपढ़ लगने लगे।

मदन मोहन के पिता जगमोहन वर्षों पहले फ़ौज में भर्ती हो गये थे। उनकी पोस्टिंग कश्मीर में हो गई और वे वहां आतंकवादियों के विरुद्ध लड़ने चले गये। उन्हें कहां पता था कि वे अपने बेटे को बृज बिहारी के आतंक के साए में छोड़ कर जा रहे हैं। जाते हुए अपने पुत्र को समझा भी गए थे कि हमेशा बृज बिहारी को अपना बाप समझे। गांव का सरपंच बाप-बराबर जो होता है।

आज मदन मोहन को बाप नाम से चिढ़ होने लगी है। वह समझता था कि बाप कंधों पर बैठा कर खेतों को सैर करवाता है, अगर गांव के शरारती लड़के मारने को दौड़ें तो बाप के पीछे छिपा जा सकता है, बाप के साथ कामों में हाथ बंटाया जाता है और फिर हंसते खेलते अपने बाप से कल को स्वयं बाप बनने का ज्ञान पा लेते हैं।

यहां बृज बिहारी जो प्रजा का बाप बना बैठा था, उसमें सब कुछ मौजूद था बस बाप के सिवा। फिर भी मदन मोहन इस सोच को अपने दिमाग़ से एक झटके में उतार फेंकता, रोज़मर्रा के कामों में व्यस्त हो जाता। उसे अपने पर हैरानी भी होती कि उसे बृज बिहारी से कुछ लगाव सा भी होने लगा।

दुनियां की ऊंच-नीच पर बैठा आंसू बहा रहा था मदन मोहन जब डाकिये ने आकर उसे एक लिफ़ाफ़ा थमा दिया। नाम उसी का, पता उसी का 'आज तक कभी किसी ने उसे चिट्ठी नहीं लिखी' फिर यह ख़त? कौन भेज सकता है उसे? लगभग बच्चों की तरह ख़ुशी हुई उसे। ख़त खोला। सबसे पहले ख़त की आख़री लाइन पढ़ी कि भेजने वाला कौन है - तुम सब का पिता जगमोहन! अब आंसुओं को कौन रोकता। बहने लगे। सुरक्षा का अहसास जाग उठा। भागा-भागा मां के पास पहुंचा क्योंकि बचपन से अपनी हर ख़ुशी मां के साथ बांटता, मगर अपने ग़म केवल अपनी तन्हाई के हवाले कर देता। मां ने भी चिट्ठी की सुनी तो कह उठी, 'चिट्ठी! सुना बेटा।'

कश्मीर के हालात, ख़ून ग़ारत, गोला बारूद, विधवाओं की सिसकियां और

आतंकवादी सभी कुछ मौजूद था उस चिट्ठी में। तुम सब की बहुत याद आती है। यहां आकर बहुत बड़ी ग़लती कर बैठा। छुट्टी तक नहीं मिलती। सच तो यह है कि वहां भी डरता था और यहां भी डर! न जाने कभी डर से निजात मिलेगी या नहीं। न जाने मुझ जैसे लोग पैदा ही क्यों होते हैं। अक़्ल पर पत्थर पड़े थे कि पेट की आग बुझाने के लिये आग में ही कूद पड़ा। मोहन बेटा, तू अपनी पढ़ाई दिल लगा कर करना। और हां, मेरे पीछे सरपंच को ही अपना मां–बाप समझना।

मोहन की अम्मा चिट्ठी को हाथ में लिये उदास ही बैठी रही। सोचती रही उसका पति कितना भोला है। कहता है सरपंच पिता समान है। अगर सरपंच बाप समान है तो फिर भला मुझ से ऐसी बातें कैसे कह लेता है। अभी कुछ ही दिन पहले की तो बात है। मीना को बुलवा भेजा और हुक्म दिया कि मदन मोहन सयाना हो गया है, अब इसका ब्याह कर डाल। घर में बहू आ जाएगी तो मेरा भी भला होगा, बुढ़ापे में काम आएगी।'

मीना से सिर झुका कर कहा था, सिमी तो अभी पढ़ रही है। ब्याह के लिये कमसिन भी है। बृजबिहारी ने झटके से उठकर बैठते हुए कहा, 'बहू तो मैने ढूंढ ली है।'

सरपंच जी, कौन है वो?

'अरे भाई सब्बो! सब्बो! अपनी सब्बो।' बृजबिहारी ने अपना निर्णय सुना दिया। मीना कभी सरपंच जी को देखती तो कभी ज़मीन को अपने पांव के अंगूठे से कुरदने लगती। हकबका सी गई। ज़मीन भुरभुरी सी महसूस होने लगी। सब्बो! उससे तो शायद गांव का कुत्ता भी शादी न करे। आखिर जानवर भी तो अपनी पसन्द से मुंह लगावे है! सब्बो तो किसी और ही दुनिया से आई लगती है।

'तुमने सुना नहीं मीना? मैं कुछ कह रहा हूं।'

मीना समझ नहीं पा रही थी कि बृज बिहारी आख़िर क्यों उसके पढ़े लिखे गबरू जवान बेटे की बलि मांग रहा है।

'ये बात अपने दिमाग में बैठा लो तुम। मदन मोहन का ब्याह सब्बो से ही होगा। चल अब जा कर ब्याह की तैयारी कर। ख़र्चा पानी मुझसे मांग लेना... और हां, सुन, अब तू भी अपने बारे में सोचना शुरू कर। कब तक जगमोहन की राह तकती रहेगी? अरे लड़ाई में जाकर कभी कोई वापिस आया है जो जगमोहन आएगा... तुझे महसूस नहीं होता कि तेरा ये संदली बदन कितना प्यासा है। इसकी प्यास बुझा दे तूं अब।' मीना नज़रें झुकाए हमेशा की तरह अन्जान बन गई। जवाब देने से डरती थी कि सरपंच जी के मुंह कैसे लगे। अकेली औरत यहां हवस के युद्धस्थल में अपनी लड़ाई लड़ रही थी। सोचती है... काश! हम औरतें भी अपने पतियों के संग ही लड़ने मरने चली जाया करतीं। अपने सुहाग की सेवा करतीं पतियों के साथ ही साथ जान दे देतीं। कम से कम गांव वाले सरपंचनुमा गिद्धों से बचाव हो जाता। पति तो चले जाते हैं अपने देशवासियों को आतंकवादियों की गोलियों से बचाने। और यहां गिद्धों के आतंक से अपनी आबरू बचाती लड़ती फिरती हैं उनकी औरतें जिन्हें ये गिद्ध केवल कच्चा गोश्त समझ हड़प लेना चाहते हैं।

यही सब सोचती मीना घर की ओर चली जा रही थी कि सामने से सब्बो मटकने की कोशिश कर रही थी। मीना के भीतर उसे देख कर एक उबाल सा उठा। लगता था प्रकृति जैसे उसकी गर्दन बनाना ही भूल गई थी। धड़ लम्बा और छोटी टांगें। कंधे को एक तरफ़ झुकाए हुए थी। वह अपनी छोटी–छोटी टांगों से मीना की तरफ़ लगभग भागी चली आ रही थी... उसे पहले से ही मालूम था कि सरपंच आज मदन मोहन की मां को क्या फ़ैसला सुनाने वाला है। सारा गांव उसे बुद्दू समझता था, मगर वह अपने मामले में पूरी काइयां थी।

मीना ने जल्दी से पगडंडी बदल खेत खेत होती घर की ओर तेज़ तेज़ क़दमों से चलने लगी। सोचती जा रही थी कि जबसे सयानी हुई है बृज बिहारी को सर पर सवार पाया है।

बृजबिहारी अपने मां बाप की दर्जन भर बच्चों में से एक था। अब तो उसे अपना नम्बर भी ठीक से याद नहीं। बाप बचपन में ही चल बसा था। मां ने अकेले ही पालन–पोषण किया था। बचपन से ही बृजबिहारी को पंचायत लगाने का शौक़ था। बातें ख़ूब बघारनी आती थीं। गाना–बजाना, खाना–पीना सभी तरह के शौक़ थे। उसने एक सेना बना रखी थी जिसका सेनापति बन वह हुक्म चलाया करता। जो भी उसका हुक्म नहीं

डाकिये ने आकर उसे एक लिफ़ाफ़ा थमा दिया। नाम उसी का, पता उसी का 'आज तक कभी किसी ने उसे चिट्ठी नहीं लिखी' फिर यह ख़त? कौन भेज सकता है उसे? लगभग बच्चों की तरह ख़ुशी हुई उसे। ख़त खोला। सबसे पहले ख़त की आख़री लाइन पढ़ी कि भेजने वाला कौन है - तुम सब का पिता जगमोहन! अब आंसुओं को कौन रोकता। बहने लगे। सुरक्षा का अहसास जाग उठा। भागा-भागा मां के पास पहुंचा क्योंकि बचपन से अपनी हर ख़ुशी मां के साथ बांटता, मगर अपने ग़म केवल अपनी तन्हाई के हवाले कर देता।

Anil Bhasin
अनिल भसीन

१९९० से आपकी सेवा में

घर होता है जीवन का आधार।
घर वोह है, जहाँ मिले सुख – शान्ति और प्यार॥
जो भी "अनिल" के पास आया
उसने अपने सपनों का घर पाया॥

Anil Bhasin
Sales Representative
Remax Realtron Realty Brokerage Inc.
183 Willowdale Avenue,
Toronto, M2N 4Y9
Cell: 416-410-GHAR(4427)
fax: 416-981-3400
anil@ghar.ca
www.ghar.ca

RE/MAX

ANIL BHASIN'S
GHAR.CA
GHAR MEANS HOME

RE/MAX® Remax Realtron
Realty Brokerage Inc

Tel: 416-222-8600 Fax: 416-221-0199
183 Willowdale Avenue, Toronto, M2N 4Y9
Independently owned

मानता उसे बृजबिहारी की डांट मिलती। छोटी सी उम्र में ही बृजबिहारी अच्छा ख़ासा दादा बन गया था। अब वह अपनी मां की डांट की परवाह भी कहां करता था।

अब लूटपाट भी बृजबिहारी की गतिविधियों का हिस्सा बन गई। खेतों, खलिहानों, बाग़ों और घरों से जो चाहता उठवा लेता। न जाने क्यों सब उसका कहा सुनते और मानते। उसकी श्याम छवि में शायद कुछ ऐसा आकर्षण होगा कि वह किसी से भी अपनी बात मनवा लेता। उसकी ज़बान में कुछ ऐसा जादू था कि वह अपने ग़लत कामों को भी सही साबित कर लेता। गांव के बड़े बूढ़े तक उसकी चक्करबाज़ी के जाल में फंस जाते। अपनी बातचीत की इसी तेज़ी के चलते नौजवानों का सहारा लेकर गांव का सरपंच बन बैठा। गांव के सभी क़ायदे कानून पीछे रह गये कि किसी बड़े बुज़ुर्ग को ही सरपंच होना चाहिये। लोकतंत्र में गुंडे बदमाश बहुत काम आते हैं। पंचायत के चुनावों में बस वही वोट डालने जा पाए जिन्हें बृजबिहारी के गुण्डों ने जाने दिया। उसके बाद से आज तक कोई भी उसे सरपंच की गद्दी से हटा नहीं पाया। गांव के बुज़ुर्ग कभी-कभी सर जोड़ कर बैठते और गांव के अच्छे दिनों को याद करके आहें भरते। और फिर अपने बूढ़े शरीर को घसीटते हुए घर की ओर जाती हुई पगडण्डियों में गुम हो जाते। जब कभी किसी ने बृजबिहारी के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई, उसकी ऐसी बेइज़्ज़ती होती कि सामने वाला शर्म से मर-मर जाता। सच बोलने वाला मुजरिम बन जाता और गुनाहगार बृजबिहारी अपनी राजगद्दी पर बेशर्म मुस्कुराहट बिखेरता रहता।

उसकी इसी बेशर्मी ने सब्बो तक को न छोड़ा था। शराब के नशे में शब्बो भी ख़ूबसूरत लगती होगी, तभी तो एक दिन गांव की दाई को बुला कर सब्बो को उसके हवाले करते हुए कहा, 'देख दाई अम्मां! यह गांव की छोरियां कहां-कहां से सामान उठा लाती हैं! अब मैं किन किन बातों का ख़्याल रख सकता हूं।'

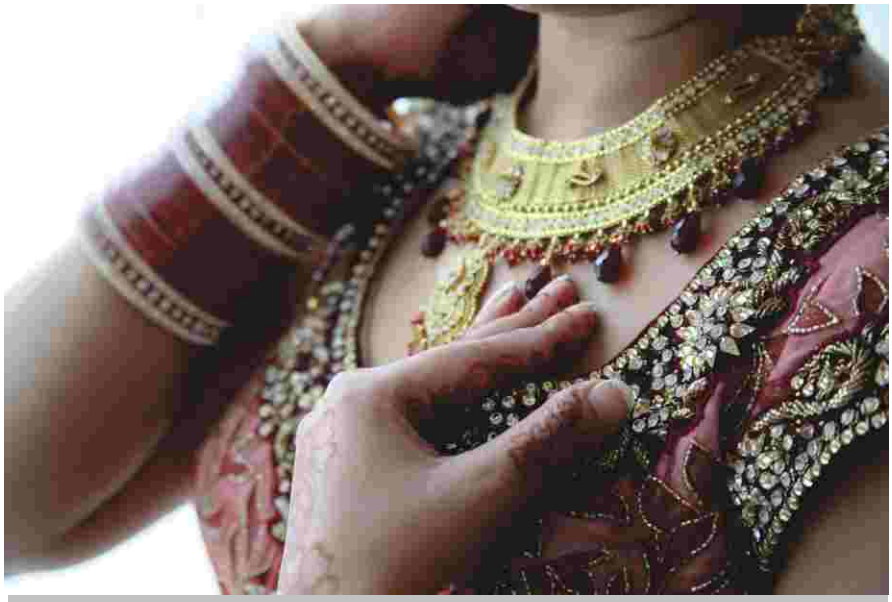

सब्बो के अतिरिक्त भला किसमें दम था कि बृजबिहारी के विरुद्ध आवाज़ उठा सके। भला वह क्यों कुछ कहती। उसके ही तो मन की कर रहे थे सरपंच महाशय। वह कब से अपनी छोटी छोटी धंसी हुई आंखें लगाए हुए बैठी थी। वह अपने होने वाले विवाह के लिये ख़ुद ही कभी दर्ज़ी के पास पहुंच जाती तो कभी रंगरेज़ के पास।

सब्बो सब सुन रही थी। ख़ामोशी से दाई अम्मां के पीछे-पीछे चली गई। मगर चार दिन बाद ही लौट आई। अब वह भीगी बिल्ली नहीं घायल शेरनी लग रही थी। गांव वालों के सामने सरपंच की लम्बी नाक काटने को तैयार। वह चिल्लाए जा रही थी, 'सरपंच जी तुम तो गांव वालों के माई बाप हो। अब इस अबला को अपनी पत्नी बनाओ। भला इस अभागन से अब कौन शादी करेगा?'"

सरपंच घबरा गया। हमेशा एक वार से दो काम निकालने वाला बृजबिहारी लगभग स्तब्ध चकित था। एक लम्बे अर्से बाद उसने अपने आपको मजबूर महसूस किया था। हर परेशान औरत से चुंगी वसूल करता था। फिर मामले की तह तक पहुंच कर ही रुकता। मगर यह सब्बो तो पूरी तत्तैया निकली। जिस्म पर चिपक कर ख़ून चूसने लगी। मगर बृजबिहारी ने भी कच्ची गोलियां नहीं खेली थीं। उसके दिमाग़ मे एक तरकीब आई और होटों पर मुस्कुराहट। सामने दिखाई दिया मिट्टी का माधो मदन मोहन! अरे दिमाग़ में पहले यह क्यों नहीं आया? क़र्बानी का बकरा सामने खड़ा है और सरपंच परेशान! यह ज़रूर बात मान जाएगा और सब्बो से शादी कर लेगा। यही सोच कर उसने मीना से सब्बो की शादी की बात चलाई थी।

और मीना इस शादी की बात सुन पीली पड़ गई थी। चुप! कोई जवाब नहीं। सब्बो बेचैन, बृजबिहारी के इर्द गिर्द भिनभिना रही थी। पहली बार बृजबिहारी की कमज़ोरी उसके हाथ लगी थी। मगर जब ब्रिजबिहारी ने मदन मोहन के साथ शादी की रिश्वत दी तो सब्बो

खिल उठी। उसकी मर्दानगी को वह हमेशा ही ललचाई नज़रों से निहारा करती थी। उसे लगा कि अब तो भाग्य खुल गये। सारे गांव नाची–नाची फिरी। न्यौता भी आप ही बांटना शुरू कर दिया।

सब्बो की छोटी बहन नकटो ने जब सब्बो की यह आन बान देखी तो वह भी घुस गई सरपंच जी की सेवा करने। ऐसी घुसी की कई दिनों तक बाहर ही नहीं निकली। कुछ गांव वाले बातें भी बनाने लगे थे कि आख़िर यह सब क्या हो रहा है। मगर ऐसे भी थे जो सरपंच को परमेश्वर का रूप मानते। नकटो उनके हिसाब से पुण्य कमा रही थी। सरपंच को जब कोई नया शिकार मिलता, तो बस ख़ुद ही पकाता और ख़ुद ही खाता। वैसे कभी–कभी कुछ बचा खुचा अपने उन साथियो के सामने भी फेंक देता जो मुंह से लार टपकाते शिकार को निहारते रहते। और फिर साथियों पर रौब गांठता, 'भाई हम अकेले कभी नहीं खा सकते। बांट कर खाने का मज़ा ही अलग है।'

सब कुछ समझते हुए भी साथी लोग चुप रह जाते। ऐसा बहुत बार होता कि कोई नई लड़की या औरत दिखाई देती और बृजबिहारी तीन चार या अधिक दिनों के लिये अपने कमरे में बंद हो जाता। और फिर जब बाहर आता तो पंचायत लगा कर बैठ जाता। ऐसा चीख़ता चिंघाड़ता जैसे बाहर बैठे रातों दिन काम करने वाले तो ऐश कर रहे थे और वह नकटो जैसी किसी के साथ बंद कमरे में उसकी टूटी नाक गढ़ रहा है। सभी साथी सब कुछ समझते थे मगर बस अपनी भाग्य रेखाओं से नाराज़गी व्यक्त कर लेते।

जब गांव वालों तक ख़बर पहुंची कि बृजबिहारी मदन मोहन का विवाह सब्बो के साथ करवाने पर तुला हुआ है तो वे भौंचक्के रह गये। क्या अन्याय है ! कितना ज़ुल्म है? बेचारे मदन मोहन ने ऐसा कौन–सा पाप कर दिया था जिसकी इतनी बड़ी सज़ा उसको दी जा रही है। कितनी सेवा करता है बेचारा सरपंच जी की और इसका यह बदला!

सरपंच को जब कोई नया शिकार मिलता, तो बस ख़ुद ही पकाता और ख़ुद ही खाता। वैसे कभी-कभी कुछ बचा खुचा अपने उन साथियो के सामने भी फेंक देता जो मुंह से लार टपकाते शिकार को निहारते रहते। और फिर साथियों पर रौब गांठता, 'भाई हम अकेले कभी नहीं खा सकते। बांट कर खाने का मज़ा ही अलग है।'

मीना अपने बेटे के लिये गांव भर से ख़ुशामद करती फिरी। उसके बेटे को सरपंच की हवस की भेंट चढ़ाया जा रहा था। कोई तो उन पर दया करके बृजबिहारी से बात करे। सब्बो से शादी की ख़बर सुन कर मदन मोहन जैसे मनो बोझ के नीचे दब गया था। मगर वहां तो सब बृजबिहारी के क्रोध से डरे हुए थे। इंसाफ़ मांगे तो कौन? सब्बो के अतिरिक्त भला किसमें दम था कि बृजबिहारी के विरुद्ध आवाज़ उठा सके। भला वह क्यों कुछ कहती। उसके ही तो मन की कर रहे थे सरपंच महाशय। वह कब से अपनी छोटी छोटी धंसी हुई आंखें लगाए हुए बैठी थी। वह अपने होने वाले विवाह के लिये ख़ुद ही कभी दर्ज़ी के पास पहुंच जाती तो कभी रंगरेज़ के पास।

उसे कोई फ़र्क नहीं पड़ता था कि कोई भी उसकी ख़ुशी में शामिल होने को तैयार नहीं हो रहा था। सब मदन मोहन के शोक में संतप्त थे। सबके मुंह पर एक ही बात, बेचारा बेमौत ही मारा जाएगा। सब्बो जब ख़ुशी में दांत निपोरती तो पायोरिया से ग्रस्त मसूढ़े पूरी फ़िज़ां में बदबू फैला देते। मगर उसे क्या फ़र्क पड़ता। वह हर वक़्त गुनगुनाती और ठुमक–ठुमक इधर से उधर फुदकती रहती। सुनार के पास जाकर माथे का टीका अपनी छोटी सी पेशानी पर सजा कर देखती। घुंघराले काले बाल छप्पर की तरह चेहरे के चारों तरफ़ छा जाते। छोटी गर्दन, तंग पेशानी, बाहर को निकले दांत जैसे डारविन की थ्योरी का शाहकार मालूम होती थी।

मदन मोहन अभी तक कुछ समझ नहीं पा रहा था। सारी उम्र गधा बन कर सेवा की सरपंच की। बाप समान माना। कभी–कभी अपने मन को समझाने लगता कि सरपंच भी उसे प्यार करता है। नहाने के लिये ख़ुशबुदार साबुन और साल भर में दो जोड़े कपड़े भी लेकर देता है। और आज तो सरपंच ने बहुत से नये कपड़े बनवा कर दिये हैं। नया जूता भी। जी चाहता है कि इसी नये जूते से सरपंच की सेवा करे। अब तो शादी का दिन सिर पर खड़ा है।

दुल्हन बनी सब्बो के लिये समय काटना मुश्किल हो रहा था। वह बेचैन थी मदन मोहन को दुल्हे के रूप में देखने को। पंडित जी ने पूजा शुरू कर दी। मदन मोहन को आवाज़ दी। मगर वह घर में होता तो आता ना। किसी ने बताया कि उसने मदन मोहन को शाम के समय बरगद वाले मंदिर की तरफ़ जाते देखा था। एक–एक कर सभी लोग उठ कर घरों को वापिस चलने लगे।

अब सब्बो भी थकने लगी थी। बृजबिहारी भी अभी तक नहीं पहुंचे थे। सब्बो ने अपने दुल्हन के परिधान की चिंता नहीं की... बस उठी और चल दी सरपंच के घर की ओर। ◆

केतलीना

अर्चना पैन्यूली, डेनमार्क

जबसे केतलीना ने अपनी जिन्दगी के अठारह वर्ष पूर्ण किये घर की वित्तीय व्यवस्था उसकी भी समस्या बन गई। सुन्दर, कमसीन, यौवन की पींगें भरती केतलीना को अभी चन्द माह पूर्व तक अपनी पढ़ाई, परिधान, सखियों व मनोरंजन से ही सरोकार रहता था। इस उम्र ने उससे बाल्यपन की बेफिक्री व निश्चिन्तता छीन ली। जिन्दगी व घर के गंभीर मसलों में वह अनायास ही सुविचारित व सुचिन्तित हो गई। उसे यह उद्विग्नता होने लगी कि उसकी माँ फरेरा घर के तमाम खर्चों के अलावा उसकी यूनिवर्सिटी की पढ़ाई का खर्चा व उसके दो छोटे भाईयों की परवरिश अपनी सीमित आय में कैसे करेगी। अस्पताल में मरीजों के लिये पट्टियां बनाने व कपड़े सिलने के श्रमसाध्य काम में फरेरा की आमदनी इतनी नहीं है कि पांच सदस्यों की जीविका चल जाये। लियोपोल्डो का योगदान उनकी जिन्दगी में बस इतना है कि फरेरा को उससे दो पुत्र प्राप्त हैं और केतलीना को दो भाई जिन्हें अंग्रेजी भाषा के अनुसार 'हाल्फ ब्रदर' कहा जाता है।

अक्सर उसकी अपनी माँ के साथ घर के खर्चों व उनकी आय को लेकर गहरी चर्चा छिड़ जाती। अभी उसकी चार वर्षों की पढ़ाई शेष है।

छात्रवृत्ति मिलने पर भी फरेरा के लिये उसकी उच्च शिक्षा का खर्चा जुटाना भारी पड़ रहा है। और दोनों छोटे भाई ऐन्जीलो और जोड अभी बालक ही हैं – एक दस का व दूसरा आठ का। माँ पैंतालिस की हो चली हैं। उन्होंने केतलीना के पिता की मौत के छः वर्षों बाद लियोपोल्डो लोपेज सन्तोज से विवाह किया था। सतौले पिता, लियोपोल्डो लोपेज सन्तोज केतलीना की जिम्मेदारी क्या लेते जब वो अपने खुद के दो लड़कों की जिम्मेदारी लेने से कतराते हैं।

उस दिन जब केतलीना फरेरा के साथ बैठे हुये घर की वित्त–व्यवस्था को लेकर चिन्ताकुल थी कि फरेरा ने उसे वह बात सुझायी जो सम्भवतः उसके अन्तःकरण में कभी से दबी पड़ी थी और रह–रह कर दंश मारती थी। 'केतलीना तेरे डैडी भारत के एक अमीर घराने के थे। उनकी वहाँ जमीन, जायदाद व बंगला था। एक पब्लिक स्कूल भी उनका वहाँ चलता था। तू वहाँ जाकर अपना पैतृक हक मांग।'

केतलीना सोच में पड़ गई। पैतृक हक अगर यह स्वतः ही मिल जाये तो अच्छा रहता है मगर यदि इस अधिकार की मांग करनी पड़े तो यह पहलू इतना जटिल व संवेदनशील हो जाता है कि वस्तुपरक सम्पत्ति के लिये अपनों को ललकारना इससे भी कठिन लड़ाई भला इस संसार में है?

इतने में घर का दरवाजा दरका और लियोपाल्डो प्रगट हुआ। घरों व भवनों में वह रंगाई का काम किया करता है, जिस वजह से उसके पहने कपड़े चूने व सफेदी से रंगे व सख्त हो रखे हैं। साथ ही शराब की बू उससे आ रही है। पता नहीं उसकी जिन्दगी की वह परेशानियां क्या हैं जो उसका शरीर मदिरा में राहत महसूस करने लगा है। जितना वह कमाता है सब पीने में उड़ा देता है।

उन सभी पर अपनी नशीली आँखें घुमाते हुये वह चहका, 'ओह हो हो केतलीना, ऐन्जीलो और जोड अपनी मां के साथ बैठे हैं। हंसी–मजाक कर रहे हैं। कितना खुबसूरत नजारा है हो हो।' करीब आकर उसने अति स्नेह से अपने पुत्रों के सिर पर हाथ फेरा, फिर केतलीना को पकड़ कर उसे अपने से चिपटाने लगा। उसे हिकारत से देखते हुये केतलीना ने उसे परे झटक दिया। जब वह शराब के सुरूर में रहता है तभी वह उससे बात करता है, नहीं तो गहरी चुप्पी, निर्लिप्त नजर, उदासीन व्यवहार। कौन सी कक्षा में वह पहुँच गई है? कितनी लंबी वह हो चुकी है? उसका जन्मदिन कब आता है? उसे कोई सरोकार नहीं।

फरेरा उसे कोसने लगी तो वह फरेरा को गाली बकते हुये मारने के लिये दौड़ा। फरेरा से वह पीये हुये में भी ढंग से बात नहीं करता। मगर एक शराबी का शरीर शिथिल होता है। वह गुर्राता तो है मगर उसमें लड़ने की ताकत नहीं होती। सो उसके बजाय फरेरा ने उसे चपट लगाई। वह जमीन पर औंधा गिर पड़ा। जमीन पर छटपटाते हुये बकने लगा, 'फकिन, ब्लडी वूमेन मुझे अपने बच्चों को प्यार भी नहीं करने देती।'

ऐन्जीलो व जोड रूंवासे हो गये। केतलीना उन्हें बाहर घर के पास ही बने एक पार्क में ले गई। लियोपोल्डो उसका अपना बाप नहीं है सो उसकी दुर्दशा से वह उतनी प्रभावित नहीं होती थी जितने कि ऐन्जीलो व जोड हो जाते हैं। दोनों बालक अपने पिता को ऐसे विक्षिप्त अवस्था में देख बुरी तरह सहम जाते। कभी–कभी रोने लगते तो केतलीना का दिल पसीज जाता। जिस घर का पुरुष अपनी आमदनी से अधिक पीने में लगा दे, पति–पत्नी के बीच प्रेम के बजाय नफरत पनपने लग जाये तो

पैतृक हक अगर यह स्वतः ही मिल जाये तो अच्छा रहता है मगर यदि इस अधिकार की मांग करनी पड़े तो यह पहलू इतना जटिल व संवेदनशील हो जाता है कि वस्तुपरक सम्पत्ति के लिये अपनों को ललकारना इससे भी कठिन लड़ाई भला इस संसार में है?

उस घर की स्थिति कैसी हो सकती है? तंगी, घुटन व तनाव उनके घर के वातावरण में ऐसे छाने लगे हैं जैसे हवा छायी रहती है, और सबसे अधिक फरेरा को प्रभावित करते हैं। केतलीना अपनी माँ के प्रति सहानुभूति से भर जाती है कि दो आदमी उसकी मां की जिन्दगी में आये मगर दोनों ही बेकार व बेवफा निकले, जिनसे मात्र मातृत्व भार ही उसे मिला।

जब केतलीना के पैतृक हक की बात हुई तो लाजमी ही उसके जन्म की भी बात होगी। किन हलातों में उसका जन्म हुआ? जन्म देने वाले माता–पिता की आपसी भेंट कैसे हुई? करीब दो दशक पूर्व उसके हरफनमौला पिता अनिल कोहली ड्रग्स पेडलिंग के लिये मशहूर देश कोलबिंया की राजधानी बोगोटा पहुँचे। उनकी कंपनी में चलने वाली केन्टीन में उन

CENTENARY OPTICAL

For A Better View of The World

We Offer Affordable Prices in a Wide Variety of Fashionable Frames & Lenses

Designer Frames,
Contact Lenses: Colored, Toric, Bifocal
Eye Exams on Premises,
Brand Name Sun Glasses
Most Insurance Plans Accepted

416-282-2030

2864 Ellesmere Rd, @ Neilson Scarborough, Ontario M1E 4B8

RAVI JOSHI
Licensed Optician &
Contact Lens Fitter

❄ ❄ ❄ ❄

SAI SEWA CANADA

(A Registered Canadian Charity)

Address: 2750, 14th Avenue, Suite 201, Markham, ON, L3R 0B6
Phone: (905) 944-0370 Fax: (905) 944-0372
Charity number: 81980 4857 RR0001

Helping to Uplift Economically and Socially Deprived Illiterate Masses of India

Thank you for your kind donation to SAI SEWA CANADA. Your generous contribution will help the needy and the oppressed to win the battle against lack of education and shelter, disease, ignorance and despair.

Your official receipt for Income Tax purposes is enclosed.

Thank you, once again, for supporting this noble cause and for your anticipated continuous support.

Sincerely yours,

Narinder Lal • 416-391-4545

Service to humanity

पुर्तगाली सामाजिक सरंचना के अनुसार सन्तान माता-पिता दोनों का ही सरनेम वंशानुक्रम में प्राप्त करती है, जिसमें माता का सरनेम पिता के सरनेम से पहले लगता है। सो केतलीना का पूरा नाम केतलीना मिलो कोहली था। मगर जिस पिता को उसने कभी देखा नहीं, जिससे उसकी माँ की शादी तक नहीं हुई उनका सरनेम उत्तराधिकार के रूप में अपने नाम के साथ घसीटना उसे व्यर्थ लगता है। सो वह सिर्फ केतलीना मिलो बन कर रह गई।

दिनों फरेरा परिवेषिका थी। दोनों एक-दूसरे को विशेष निगाहों से देखते, मुस्कुराते। अधिक समय नहीं लगा कि दोनों प्रेम अनुबन्ध में बंध गये जिसने धीरे-धीरे अपनी सभी मर्यादायें पार कर ली। फरेरा जब गर्भवती हुई तो उसने अनिल से शादी के लिये आग्रह किया। अनिल को तब तक कोलंबिया में साल भर हो गया था जिस अवधि में उसने एक पुर्तगाली महिला से दैहिक रिश्ते बनाकर उसे गर्भवती कर दिया था। मगर उसके घरवाले इस तथ्य से बिल्कुल बेखबर थे कि उनका सपूत भारतभूमि से सुदूर बैठे अपनी संस्कृति का कैसा उपहास बना रहा है।

मगर वह कायर फरेरा से विवाह करने के बजाय उसे गर्भ गिराने की सलाह देने लगा, जिसके लिये फरेरा ने स्पष्ट इंकार कर दिया। प्रकृति उसे पहली बार मां बनने का गौरव प्रदान कर रही थी वह इसे नष्ट नहीं करना चाहती थी। जब वह गर्भपात के लिये कतई नहीं मानी तो अनिल ने फरेरा से कहा कि वह भारत जायेगा और व्यक्तिगत तौर पर अपने माता-पिता को अपने व फरेरा के आपसी सन्बन्धों के सन्दर्भ में समझायेगा। वे जरूर समझ जायेंगे और उसकी व फेररा की शादी घर वालों की मर्जी के साथ उनके आर्शीवाद के साथ होगी। फरेरा को यह बात कभी समझ नहीं आती थी शादी के लिये उसके माता-पिता की सहमति जरूरी क्यों है। उसके साथ सेक्स करते वक्त तो उसे उनका ध्यान नहीं आया। अब क्यों? बच्चों की जिन्दगी में माता-पिता की सत्ता भी उसके लिये आत्मसात करना मुश्किल था। मगर फिर भी उसके भारत प्रस्थान के दिन फरेरा उसे एयरपोर्ट छोड़ने आयी। उसे शुभ यात्रा की शुभकामनायें देते हुये एक गहरी उम्मीद से विदा किया। मगर अफसोस वह विमान भारत पहुँचा ही नहीं। आधी दूरी भी तय नहीं की कि मार्ग में ही दुर्घटनाग्रस्त हो गया। अनिल से फरेरा का विवाह कभी हो ही नहीं पाया। उसे कुछ भी हासिल नहीं हुआ, सिर्फ छः माह उपरान्त जब केतलीना का जन्म हुआ तो पिता

से वंचित एक बच्ची की परवरिश की जिम्मेदारी सिर पर पड़ गई।

पुर्तगाली सामाजिक सरंचना के अनुसार सन्तान माता–पिता दोनों का ही सरनेम वंशानुक्रम में प्राप्त करती है, जिसमें माता का सरनेम पिता के सरनेम से पहले लगता है। सो केतलीना का पूरा नाम केतलीना मिलो कोहली था। मगर जिस पिता को उसने कभी देखा नहीं, जिससे उसकी माँ की शादी तक नहीं हुई उनका सरनेम उत्तराधिकार के रूप में अपने नाम के साथ घसीटना उसे व्यर्थ लगता है। सो वह सिर्फ केतलीना मिलो बन कर रह गई। लेकिन अब सहसा पिता का सरनेम उसके लिये अति महत्वपूर्ण हो गया। 'कोहली,' इसी सरनेम के दम पर तो वह अपने हक की बात करेगी। 'केतलीना मिलो कोहली,' वह बुदबुदाने लगी।

भारत जाने से पूर्व केतलीना ने उस अजनबी देश के नियम, सामाजिक प्रणाली व आचरण से थोड़ा रूबरू हो जाना बेहतर समझा। बॉलीवुड की तमाम फिल्में उसने देखी। इन्टरनेट व पुस्तकों के जरिये भारत के भौगोलिक व सांस्कृतिक मूल तत्वों का अन्वेषण किया। 'नमस्ते' व 'धन्यवाद' जैसे विनम्र शब्दों का अभ्यास किया। रिश्तों के नाम भी उसने सीखे। यह उसे अपनी माँ से पता चल चुका था कि उसके पिता के परिवार में माता–पिता के अलावा उनका एक बड़ा भाई व एक छोटी बहन थे। और उनकी संस्कृति में किसी को नाम से सम्बोधन करना वर्जित है।

केतलीना को भारत जाने की तैयारी करते देख फरेरा का भी दिल सहम गया। केतलीना का अनिल कोहली की लड़की होने के जो कुछ भी सबूत उसके पास संचित हैं, उसने केतलीना को थमा दिये। अस्पताल से मिला बर्थ सर्टिफिकेट जिसमें पिता के नाम के कॉलम में अनिल कोहली दर्ज है। सरकारी रजिस्ट्रेशन ऑफिस के दस्तावेज की कॉपी जिसमें उसका नाम पूरा नाम केतलीना मिलो कोहली अंकित है। कुछ छायाचित्र जिनमें फरेरा प्रेम मुद्रायें बनाती हुई अनिल कोहली के पार्श्व में उससे लिपटी खड़ी है, और जो इस बात की सूचक है कि इन प्रेम मुद्राओं की परकाष्ठा केतलीना का जन्म है।

भूली–बिसरी फोटुओं को एकटक निहारते हुये फरेरा बोली, 'वह मेरे साथ घूमता था, सोता था मगर उसने कभी भी अपने घर वालों को मेरे विषय में नहीं बताया। जब मैं तुझे लेकर प्रेगनेंट हो गई और मैंने उसे शादी करने को कहा तो कहने लगा कि उसे अपने घर वालों से पूछना पड़ेगा। हूँ वह दिन आया ही नहीं। उसकी मौत के बाद कई बार मैंने कोहली परिवार को पत्र लिखा कि उनका बेटा अनिल बेऔलाद नहीं मरा है। उसका एक वारिस है। तेरे विषय में उन्हें बताया कि तू उसकी बेटी है। मगर उन्होंने मेरे किसी भी पत्र का जवाब नहीं दिया। शायद उन्हें यह भान नहीं रहा होगा कि वह बेटी कभी बड़ी भी होगी।' फोटुओं से नजर उठकर अनायास ही फरेरा की निर्निमेष नजरें केतलीना के व्यक्तित्व को टटोलने लगी। निर्जीव फोटो व कागजी दस्तावेजों से अधिक केतलीना की सजीव दैहिक संरचना दर्शाती है कि वह एक भारतीय वंशज है। उसके अनुवंशिकी अनुक्रम में भारतीय जिन्स अधिक प्रभावी हैं। उसने हूबहू अपने पिता अनिल कोहली का स्वरूप ग्रहण किया – काले बाल, गेहुंआ रंग, गहरी भूरी आँखें।

बहरहाल अपनी पहचान के प्रमाण पत्रों को यत्न से संभाले एक सुबह केतलीना भारत के लिये निकल पड़ी। फरेरा, ऐन्जीलो व जोड उसे एयरपोर्ट छोड़ने आये। फरेरा उसे समझाते गई कि अगर कोहली परिवार ने उसे अपने बेटे की बेटी मानने से इंकार कर दिया तो वह उस स्थिति में क्या करे। कानून सभी देश में होते हैं। वह वहाँ के कानून का सहारा ले। स्वयं को कोहली परिवार का वशंज साबित करने के लिये अगर उसे डी.एन.ए. परीक्षण से भी गुजरना पड़े तो वह पीछे न हटे। अपनी माँ की सलाह पर केतलीना अन्यमनस्क सी, भ्रमित सी लगातार सिर हिलाती गई। किसी के लिये इससे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण बात क्या हो सकती है कि उसे स्वयं को अपने पिता की सन्तान सिद्ध करना पड़े। किन्तु केतलीना फिलहाल सभी प्रकार की लज्जा व किंकर्तव्यविमूढ़ता से ऊपर उठ चुकी है। वह जल्दी से उन क्षणों को आने देना चाहती है जब वह अपने पिता के घर वालों के सम्मुख गर्दन उठा कर खड़े हो और बड़ी गर्मजोशी से उनसे बोले : 'मैं अनिल कोहली की बेटी हूँ।'

चैक–इन के बाद सिक्योरिटी पार करने का समय आया तो केतलीना ने अपनी माँ व भाइयों से विदा ली। थम्स–अप का साइन बनाते हुये ऐन्जीलो व जोड ने उसे 'बोम सोर्टे–ऑल द बेस्ट' कहा।

'ओबरीगाडा – थैंक्यू!' केतलीना मुस्कुराते हुये बोली।

'ऐट लोगो – बॉय,' फरेरा, ऐन्जीला व जोड तीनों एक स्वर में बोलते हुये हवा में हाथ लहराने लगे।

'ऐट लोगो,' कहते हुये केतलीना सिक्योरिटी डेस्क की तरफ बढ़ गई – एक ऐसे गंतव्य को जाने के लिये जो कई हजार किलोमीटर दूर, ग्लोब के दूसरी ओर स्थित है।

भूढाल, पठार, वनप्रान्त व सागर लांघता हुआ वायुयान पश्चिम से लगातार पूर्व की तरफ बढ़ता गया। केतलीना के मन में कई भावों का समन्वय समाया हुआ। नये अनजान देश में जाने की उत्तेजना तो अपनों से मिलने की एक उत्कन्ठा भी तो जटिल प्रश्नों की बैचेनी अलग। उसे देख कर कोहली परिवार की क्या प्रतिक्रिया होगी? क्या वे उसे अपनायेंगे? विश्व की कितनी ही भाषाओं, जोकि उसने गूगल ट्रांसलेशन से रटी थी, में दोहराये जा रही थी :

'मैं अनिल कोहली की बेटी हूँ।
आई एम अनिल कोहलीज डॉटर
इयु सौ फिल्हा डो अनिल कोहली
इच बीन अनिल कोहलीस टोचर

साया पुतरी अनिल कोहलीज।'

बोगोटा से मेडरिड (स्पेन), वहाँ से पेरिस और फिर दिल्ली पहुंचते–पहुंचते उसे अड़तालीस घंटे से ऊपर लग गये। हिन्दुस्तान की धरती पर विमान जब खटाक् से उतरा तो स्थानीय समय के अनुसार सुबह के पाँच पैंतीस हो रहे हैं। एयरपोर्ट की औपचारिकताओं को निपटा कर बाहर आने पर डेढ़ घंटे और लग गये। दो ठहराव उसने पार किये थे, दो रातें विमान की तंग कुर्सी पर ऊंगते हुये बीती थी। आँखें बोझिल व देह पस्त। इधर–उधर कहीं निहारने, नई जगह की विभिन्नतायें व विसंगतियां देखने की अभी उसकी इच्छा बिल्कुल नहीं है। एयरपोर्ट से टैक्सी पकड़ कर वह सीधे होटल टुरिस्ट पहुँच गई जिसकी बुकिंग उसने बोगोटा से ही करवा ली थी। होटल में चेक–इन करके कमरे में आयी तो लगा कि जन्नत मिल गई हो। जीन्स व स्वेटर उतार, स्वयं को हल्का बना वह सीधे बेड पर पसर गई। बीस घंटों तक वह सोती रही। उठी तो सुबह के चार बज रहे थे। 'इंडिया!' वह बुदबुदाई। एकाएक उसे अपने पिता के घर वालों का ध्यान आ गया और हिन्दुस्तान आने का अपना मकसद भी। बदन में एक झुरझुरी सी दौड़ने लगी।

किसी बात की जल्दी नहीं है। अठारह वर्ष उसने इन्तजार किया है। चन्द घंटे और सही। बड़े इत्मीनान से वह नहाई, स्मार्ट कपड़े पहने, करीने से बाल बनाये, चेहरे पर मेकअप लगाया। फिर नीचे होटल के रेस्टोरेंट में ब्रेकफास्ट के लिये गई। अब वह नये मुल्क को परखने के लिये बिल्कुल तरोताजा थी। लोगों को वह निहार रही थी। यहाँ की हवा का स्पर्श महसूस कर रही थी। भौज्य पदार्थों में उपलब्ध विविधता देख वह कोलंबिया से इसका मूल्यांकन करने लगी।

'विद्या मंदिर पब्लिक स्कूल, 119 बसंत कुंज नई दिल्ली।' बार–बार अपने पर्स से चिट निकाल कर वह स्कूल का पता देखती जा रही थी। इसी स्कूल के दम पर उसे अपने पिता के घर वालों का पता लगाना है। बहरहाल स्कूल व कॉलेज ऐसे केन्द्र होते हैं कि जो युगों–युगों तक वैसे ही रहते हैं। एक, दो दशकों का इन केन्द्रों पर कोई विशेष फर्क नहीं पड़ता। इमारत में समयानुसार मरम्मत, शिक्षा प्रणाली में थोड़ा बहुत फेर–बदल व प्रतिवर्ष छात्र–छात्राओं के बदलने के अतिरिक्त यहाँ शेष सभी कुछ अचल बना रहता है। कोलंबिया में जब उसने इन्टरनेट के गूगल सर्च इंजन पर 'स्कूल्स इन देल्ही' टाइप किया था तो दिल्ली के तमाम स्कूलों की एक लिस्ट स्क्रीन में प्रगट हो गई थी जिनमें से विद्या मंदिर पब्लिक स्कूल, बसंत कुंज भी था। उसने इन्टरनेट से इस स्कूल का पता व फोन नंबर नोट कर लिया था।

ऊपर कमरे में आकर वह फोन के पास बैठ गई। जिन्दगी अजीब क्षण लेकर आती है। उसके हाथ कंपकंपाने लगे जब उसने स्कूल का नंबर दबाया। 'हैलो विद्या मंदिर पब्लिक स्कूल,' दूसरे छोर से किसी स्त्री, शायद स्कूल की सेकेटरी की आवाज आयी।

केतलीना ने अंग्रेजी में पूछा, 'क्या मैं प्रिसींपल देवन्द्र शर्मा से बात कर सकती हूँ?'

'होल्ड ऑन,' कह कर सेकेटरी ने आगे लाइन कनक्ट करवा दी। थोड़ी देर में एक पुरुष का स्वर कौंधने लगा।

'क्या मैं प्रिसींपल देवन्द्र शर्मा से बात कर सकती हूँ?'

'मैं देवेन्द्र शर्मा ही बोल रहा हूँ।'

'कृपया मैं शिव दयाल कोहली से बात कर सकती हूँ?'

एक पल की खामोशी, फिर प्रिसींपल ने पूछा। 'आप कौन व कहाँ से बोल रही हैं। आपको क्या मालूम नहीं कि शिव दयाल कोहली जी को तो मरे हुये कई साल हो गये हैं।'

'ओह!' केतलीना ने अफसोस प्रकट किया।

'अब शिव दयाल कोहली के लड़के नरेन्द्र कोहली यहाँ बैठते हैं। आपको उनसे बात करनी है?'

'ठीक है,' केतलीना असमंजस में बोली।

प्रिसींपल नरेन्द्र कोहली से लाइन कनेक्ट करवाने लगा। फोन पर संगीत की कोई मधुर धुन बजने लगी। वह रिसीवर थामे मनन करने लगी, नरेन्द्र कोहली यानी उसके टीयो – पिता के बड़े भाई। शिव दयाल कोहली यानी उसके आवो (दादाजी) का देहान्त हो चुका है।

चन्द क्षणों उपरान्त किसी अन्य व्यक्ति का स्वर फोन पर सुनाई पड़ा। 'हैलो नरेन्द्र कोहली डिस साइड।'

केतलीना का दिल धड़क गया। एक क्षण में वह कितने ही भावों से गुजर गई। बड़ी सावधानी से संयत स्वर में वह बोली, 'जी मैं केतलीना मिलो कोहली बोल रही हूँ। कल यहाँ कोलंबिया से आयी हूं। आपके भाई अनिल कोहली जिनकी लगभग उन्नीस वर्ष पूर्व मेडरिड के बराजस एयरपोर्ट के पास जो ऐवियान्का बोइंग 747 क्रेस हुआ था...'

'सत्ताईस नवम्बर 1983 को हुआ था वह प्लेनक्रेस' नरेन्द्र कोहली गंभीर स्वर में बोले। उन्हें तिथि अभी तक याद है।

'हाँ सत्ताईस नवम्बर 1983। उस एयरप्लेन में अनिल कोहली भी यात्रा कर रहे थे और क्रेस में उनकी भी...'

'आपका उस दुर्घटना से क्या सम्बन्ध है?' नरेन्द्र कोहली ने कड़कदार आवाज में पूछा।

'मैं अनिल कोहली की बेटी हूँ। आई एम अनिल कोहलीज डॉटर' बड़ी मुश्किल से केतलीना कह पायी।

'क्या? क्या कहा?'

'जी मैं अनिल कोहली की लड़की हूं। वो मेरे पिता थे। मैं यहाँ अपने पिता के देश व उनके घर वालों से मिलने आयी हूँ।' तीन वाक्य एक सांस में कह कर केतलीना ने एक लंबी सांस भरी।

काफी देर तक एक स्तब्धता रही। केतलीना असमंजस से 'हैलो हैलो' कहती

रही। बड़ी देर बाद नरेन्द्र कोहली का स्वर गूंजा, 'तुम कहाँ टिकी हो?' उनका कड़कदार स्वर शिथिल हो चुका था।

'एयरपोर्ट से कोई बहुत दूर नहीं है – होटल टुरिस्ट में।'

'ठीक है। तुम अभी अपने कमरे में ही रहो। मैं तुम्हें थोड़ी देर में फोन करता हूँ।' यह स्पष्ट था कि वो अत्यधिक स्तब्ध थे। आखिर एक अन्जान लड़की उनसे फोन पर इतनी बड़ी बात कह रही थी। उन्हें कुछ क्षण चाहिये थे सूचना पर मनन करने के लिये।

'आपको मेरे होटल का फोन नंबर मालूम है?' केतलीना ने बड़ी शालीनता से पूछा।

'नहीं। जरा लिखवा दो।'

केतलीना ने होटल का फोन नंबर व अपना रूम नंबर उन्हें लिखवा दिया। 'मैं अभी तुम्हें थोड़ी देर में फोन करता हूँ,' उन्होंने फिर से कहा और फोन की लाइन काट दी। रिसीवर नीचे रख कर केतलीना फोन के पास ही बैठी रही।

पन्द्रह मिनट बीत गये, पच्चीस बीत गये, चालीस बीत गये, पचास बीत गये, पूरा एक घंटा हो गया। फोन नहीं बजा। नरेन्द्र कोहली कहीं उसे उपेक्षित तो नहीं कर रहे हैं? फोन के पास से उठकर केतलीना कमरे में चहलकदमी करने लगी। कहीं नरेन्द्र कोहली उसे बेवकूफ तो नहीं बना रहे हैं? प्रश्न उसके मस्तिष्क में चीत्कार मचाने लगा था। एक साथ बर्थ सर्टिफिकेट, सरकारी रजिस्ट्रेशन ऑफिस का दस्तावेज, अपनी मां की अनिल कोहली के साथ उनके प्रेम को प्रदर्शित करती फोटुवें, कोर्ट, कानून, डी.एन.ए. टेस्ट जैसी बातें उसे मस्तिष्क में खलबली मचाने लगी। क्या वास्तव में उसे इन सबसे गुजरना पड़ेगा? नहीं, उसे नहीं चाहिये कोई पैतृक हक। वह बोगोटा वापस चली जाये। जो कुछ उसकी जिन्दगी में है उसी को संजोये व संवारे। एकाएक फरेरा, ऐन्जीलो, जोड व लियोपोल्डो उसके नयनों के सम्मुख आ गये। वह

अपनेपन के अहसास से भर गई। उसने जबसे होश संभाला था लियोपोल्डो को अपनी जिन्दगी में देखा था। किन्तु उसके प्रति मन में आत्मीयता का कोई भाव वह पहली बार महसूस कर रही थी।

नहीं, दूसरे ही पल उसके मन में विचार कौंधा। इतनी दूर आकर, इतनी बड़ी धनराशि खर्च करके वह यूं ही वापस नहीं जायेगी। उसकी माँ ने अपने अस्पताल में काम कर रहे एक इंडियन डॉक्टर से उधार लिया था, उसके लिये हवाई टिकट का इन्तजाम करने लिये। वह कोहली परिवार से अपने पैतृक हक की बात अवश्य करेगी। पिता की सम्पत्ति से हक मांगना हर सन्तान का जायज अधिकार है।

केतलीना इस उधेड़बुन में थी ही कि फोन यकायक बज उठा। उसने घड़ी में देखा – फोन की इन्तजारी में एक घंटा तीस मिनट हुआ था परन्तु उसे लग रहा था जैसे सदियां गुजर गई हो। लपक पर वह फोन की तरफ भागी। एक झटके से रिसीवर उठाकर, जोर से कहा, 'आलो।' उत्तेजना में भूल ही गई कि यह कोलंबिया नहीं भारत है। यहाँ आलो नहीं हैलो कहते हैं।

नरेन्द्र कोहली की बजाय उसे किसी और का स्वर सुनाई पड़ा। 'हैलो मैं नीचे रिसेप्सन से बोल रहा हूँ।'

'हाँ कहिये।'

'आपसे कोई यहाँ मिलने आये हैं। अपने को नरेन्द्र कोहली बता रहे हैं।'

नरेन्द्र कोहली को पाकर उसे लगा कि जैसे उसने एक पिता पा लिया हो। वह एक अपनेपन के अहसास से भर उठी। मयंक के रूप में ईरमाओ (भाई) मिल गया था और ईशा के रूप में ईरमा (बहन)। और टीया बुआ उसे अपने ही तरीके से प्यार कर रही है। सभी उसकी शक्ल को बुआ की शक्ल से मिला रहे हैं, कह रहे हैं कि जब बुआ जवान थी तो उसी की तरह दिखती थी।

केतलीना का हृदय वक्ष में बेतहाशा डोलने लगा। 'ठीक है। मैं नीचे आती हूँ,' कहते हुये उसने रिसीवर नीचे रखा। एक पल के लिये उसने स्वयं को दर्पण में निहारा। फिर कमरा बंद करके, जल्दी से सीढ़ी उतरते हुये नीचे लॉबी में आ गई। लॉबी में पहुँचते ही उसके कदम ठिठक पड़े। सामने एक शिष्ट व्यक्ति खड़े – न बूढ़े, न जवान। उनकी भी नजरें केतलीना की तरफ उठीं। दोनों की दृष्टि आपस में बंध गई। समय जैसा ठहर गया हो। एक–दूसरे को निहारते हुये वह दोनों उस व्यक्ति को तलाश कर रहे थे जो उन्हें परस्पर जोड़ता था। उनके व्यक्तित्व में केतलीना अपना पिता तलाश कर रही थी और नरेन्द्र कोहली उसके व्यक्तित्व में अपना भाई।

केतलीना जब अपने आश्चर्य से उभरी, उसे कुछ ध्यान आया तो उसने नरेन्द्र कोहली को हाथ जोड़ कर भारतीय परंपरानुसार नमस्ते किया। हल्के से मुस्कुराते हुये उन्होंने उसका अभिवादन कबूल किया। 'गॉड ब्लैस यू,' होंठ स्वतः ही फड़फड़ा उठे।

बीस मिनट बाद केतलीना होटल टुरिस्ट से चेक–आउट करके नरेन्द्र कोहली के साथ उनकी भव्य कार में उनके घर जा रही थी। नरेन्द्र कोहली उसकी जिन्दगी के सन्दर्भ में उससे तमाम प्रश्न पूछ रहे थे। वह कहाँ पढ़ती है? क्या करती है? किनके साथ रहती है? जब कोई अपना पहली बार मिलता है, जिसके विषय में हमें कुछ पता नहीं होता और उसके विषय में सभी कुछ जान–समझ लेने का मन करता है तो अनन्त प्रश्न बन जाते है और जवाब अन्तहीन हो जाते हैं।

होटल टुरिस्ट से बसंत कुंज घर तक का लंबा रास्ता तय हो गया लेकिन न तो नरेन्द्र कोहली के प्रश्न समाप्त हुये और न ही केतलीना के जवाब पूरे हुये। एक चौरस भूमि पर निर्मित सुन्दर घर को देख कर केतलीना दूसरी उत्कन्ठा से भर गई। अभी उसे यह भी मालूम नहीं था कि इस घर में कौन–कौन रहता है।

खैर घर के सभी सदस्यों को केतलीना के इस आकस्मिक आगमन की सूचना मिल चुकी थी। नरेन्द्र कोहली सभी को सूचित करके उसे होटल लेने आये थे। सभी घर में एकत्र होकर बेसब्री से समुद्र पार से आये उस आगुन्तक का इन्तजार कर रहे थे, जो अपने को उनके परिवार का बता रहा था, कह रहा था वह भी कोहली है। दादी, ताऊ, ताई, उनका लड़का व लड़की उस घर के स्थाई निवासी थे। बुआ व उनके पति वहाँ केतलीना के स्वागत के लिये आ रखे थे। सभी केतलीना को निहार रहे थे और केतलीना उन्हें। सभी इतने भ्रमित थे कि होंठ बंद हो गये थे।

बड़ों से अधिक युवा नई उपजी परिस्थितियों से जल्दी ताल–मेल बिठाते है। यह उनकी उम्र की खूबी है। सो राहुल व ईशा, ताऊ के लड़का–लड़की उसे सबसे अधिक मैत्री भाव से मिले। उनकी दृष्टि उसे एक आश्वासन दे रही थी जैसे कह रही हो अगर हमारे घर के बड़े कुछ गलत कर भी दें हम उसे ठीक कर देगें। केतलीना के लिये ये पल अति संवेदनशील थे। और शायद कोहली परिवार के सदस्यों के लिये भी।

समय सबसे बड़ा चिकित्सक है। एक–दो दिन बीतने में ही केतलीना नये माहौल में थोड़ा अभ्यस्त हो गई। माहौल पराया था मगर रिश्ते पराये नहीं थे। वो सभी उसके निहायत ही अपने लोग थे। दो दिन बाद उसने अपनी मां को बोगोटा फोन किया।

'आलो – हैलो।'

'मौय – माँ।'

उसकी आवाज सुनकर फरेरा चहकी, 'केतलीना! कोमो वाई – कैसी है?'

'बॉम – गुड! इयू नॉ प्रीसूजू डी ईशु – मुझे उनमें से किसी की जरूरत नहीं पड़ी।' कोहली परिवार का वशंज साबित करने के प्रमाण पत्र उसके सूटकेस में धरे के धरे रह गये थे। उसे उन्हें निकालने की जरूरत नहीं पड़ी थी। उन सभी पर नजरें घुमाते हुये वह उन्मुक्त स्वर में अपनी माँ से बोली, 'मुझे यहाँ सभी रिश्ते खुद ही मिल गये – 'आवो, टीयो, टीया, ईरमाओ, ईरमा।'

'ऐट अग्राडेवेल – सो नाईस,' उसकी माँ बोली।

'प्रीमा ईशा मेटरीमोनिओ' वह अपनी माँ से बोली कि यहाँ कजन ईशा की शादी है।

'प्रेजर!' उसकी माँ चहकी।

'ऐट मैस टार्डे – सी यू,' कहते हुये उसने अपनी माँ से फोन पर बातचीत बंद की।

केतलीना का जन्म अजीब हालातों में हुआ था। वह जब पहली बार अपने पिता के देश उनके घर वालों से मिलने आयी तो भी हालात कुछ विशेष थे। ईशा की शादी निकट थी। कोहली परिवार उसकी शादी की तैयारी में डूबा था। दादी इतनी रुग्ण हो गई थी कि उनकी जिन्दगी बिस्तर की मोहताज बन चुकी थी। केतलीना ने सबसे अधिक द्रवित उन्हीं को

ही किया। केतलीना को जब सबसे पहली बार उनके कमरे में ले जाया गया, अपलक उसे निहारते हुये उन्होंने उसे जोर से भींच लिया, फिर फफक कर रो पड़ी। पता नहीं कौन-कौन से जज्बात उनके मन में उमड़ पड़े थे। वह केतलीना की आवो थी। उसने भी उनके चारों तरफ अपनी बाँहों का घेरा बनाकर अपना चेहरा उनके वक्ष में छुपा लिया। फिर जब वह उनसे अलग हुई तो अपने कमरे में सजे देवी-देवताओं के दरबार की तरफ आवो अपने वृद्ध हाथ जोड़ते हुये बोली, 'इतनी बड़ी कृपा भगवान तूने मुझ पर की है। मरने से पहले मुझे मेरे दिवंगत बेटे की बेटी से मिलवा दिया।' पौती से प्रथम भेंट पर उन्होंने अपना एकमात्र हीरे जड़ा आभूषण उसे भेंट कर दिया। 'मेरा इसे पहनने का अब समय गया। तुम पहनो। अपने बाद अपनी बेटी या बहू को पहनाना।'

आहिस्ते-आहिस्ते केतलीना का साक्षात्कार सभी से हो रहा था। दादी, ताऊ, ताई, बुआ, और कजन्स इन रिश्तों की अंतरंगता का अर्थ वह समझ रही थी। नई भाषा के शब्द उनसे सीख रही थी। उन्होंने भी उससे पुर्तगाली भाषा के कुछ शब्द सीखे। सुबह-सुबह उसे देखते ही सब बोलते थे, 'बोम डीया - गुड मार्निंग।'

वह खिलखिला कर हंस पड़ती।

उसने वह पाठशाला भी देखी जिसकी नींव उसके दादाजी के पिता ने रखी थी। एक विस्तृत प्रागंण में बना विशाल स्कूल, उसकी एक ऊंची दीवार पर क्रम से उसके परदादा, दादा व पिता की फोटो टंगी थी। तीनों फोटुओं के नीचे लिखे उनके जीवन परिचय को केतलीना ने पढ़ा। उसके पिता एक शिक्षित व्यक्ति थे तो दादा और परदादा विद्वता से परिपूर्ण थे। केतलीना अनायास ही कुछ पलों के लिये कहीं खो गई। फरेरा अस्पताल में एक श्रमिक और लियोपोल्डो एक मजदूर। लोग अचरज करते थे कि कैसे केतलीना पढ़ाई में इतनी अव्वल, विद्या के प्रति उसका इतना अधिक रुझान कैसे हो गया। लड़की होकर भी वह इलैक्ट्रोनिक इंजीनियरिंग कर रही थी। आखिर जिन्स भी तो कुछ होते हैं। वह एक शैक्षिक परिवार से संबध रखती है। उसकी धमनियों में एक विशिष्ट परिवार का रक्त दौड़ रहा है। अपनी उत्पत्ति को लेकर हमेशा एक लज्जा महसूस करने वाली केतलीना सहसा गर्वित हो गई।

ईशा की शादी तीसरी पीढ़ी की पहली शादी थी। ऐसे में केतलीना का वहाँ यूं अकस्मात पहुँच जाना सभी को देवयोग लग रहा था। लेडीज संगीत के दिन अपने सभी प्रीमो-प्रीमा (कजन्स) के साथ वह भी खड़ी हुई नृत्य करने के लिये। अपनी सुडौल बाँहों को हवा में लहराते हुये व लंबी टांगें जमीन पर थपथपाते हुये जब वह बॉलीवुड के गानों पर थिरकी तो सभी स्थिर होकर उसे एकटक देखते ही रह गये। शादी की शाम वह एक आकर्षण व एक अति महत्वपूर्ण अतिथि बनी रही। नरेन्द्र कोहली बड़े गर्व से उसे 'मेरी भतीजी' कहते हुये घराती व बरातियों से मिला रहे थे। सभी को ऐसा लग रहा था जैसे वह ईशा की शादी में शरीक होने कोलंबिया से आयी है।

खैर शादी की सरगर्मी के बाद कोहली परिवार ने राहत की सांस ली। एक लड़की परिवार से चली गई थी मगर दूसरी इतनी दूर से आयी थी। मयंक उसे पहले ही दिल्ली घुमा चुका था। शादी के बाद ताऊ, ताई व बुआ के साथ उसने ताजमहल व जयपुर की भी सैर की। उसके साथ हुई बातचीत से नरेन्द्र कोहली को यह सहज ही पता लग चुका था कि केतलीना के घर की आर्थिक स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं है। उसकी मां फरेरा को अपने तीन बच्चों की परवरिश के लिये जी-तोड़ संघर्ष करने पड़ रहे हैं। उन्होंने उसे बहुत सारे उपहार दिये, हवाई टिकट का खर्चा दिया और उसके सुखद आश्चर्य के लिये उसकी यूनीवर्सिटी की पढ़ाई के व्यय की भी जिम्मेदारी ली। 'आपको इतना कुछ करने की जरूरत नहीं,' केतलीना बोल पड़ी। वो गंभीर भाव से बोले, 'जो समय यूं ही निकल गया उसकी भरपायी के लिये यह कुछ भी नहीं।'

लियोपोल्डो लोपोज से उसे पिता का प्यार कभी नहीं मिला मगर नरेन्द्र कोहली को पाकर उसे लगा कि जैसे उसने एक पिता पा लिया हो। वह एक अपनेपन के अहसास से भर उठी। मयंक के रूप में ईरमाओ (भाई) मिल गया था और ईशा के रूप में ईरमा (बहन)। और टीया बुआ उसे अपने ही तरीके से प्यार कर रही है। सभी उसकी शक्ल को बुआ की शक्ल से मिला रहे हैं, कह रहे हैं कि जब बुआ जवान थी तो उसी की तरह दिखती थी। एक महीना अपनों के बीच कैसे निकल गया केतलीना को पता ही नहीं चला। वापस जाने का समय आया तो उसे ऐसे लगा जैसे वह एक नये जगत से जुड़ गई है। यह आश्वासन वह उन्हें दे चुकी है कि अब वह हर साल उनके पास आया करेगी। इतना कुछ उसकी जिन्दगी में आ गया है, उसे समेट कर रखना तो है ही। अश्रुपूर्ण नेत्रों से कोहली परिवार के सदस्यों ने उसे एयरपोर्ट पर विदाई दी। एक हजूम सा एयरपोर्ट पर लग गया।

'ऐडियस - गुडबॉय,' अपना हाथ लहराते हुये केतलीना बुदबुदाई। उसकी भी आँखें भीग गई उनसे बिछुड़ते हुये। कोहली परिवार के हरेक सदस्य ने अपना हृदय निकाल कर उसके सामने रख दिया। इससे भी अधिक क्या कोई किसी से कुछ मांग सकता है? ◆

विशेष सूचना

पाठको! हिन्दी चेतना का अक्तूबर अंक प्रतिष्ठित व्यंग्यकार, व्यंग्य यात्रा के संपादक डॉ. प्रेम जनमेजय को समर्पित विशेषांक है।

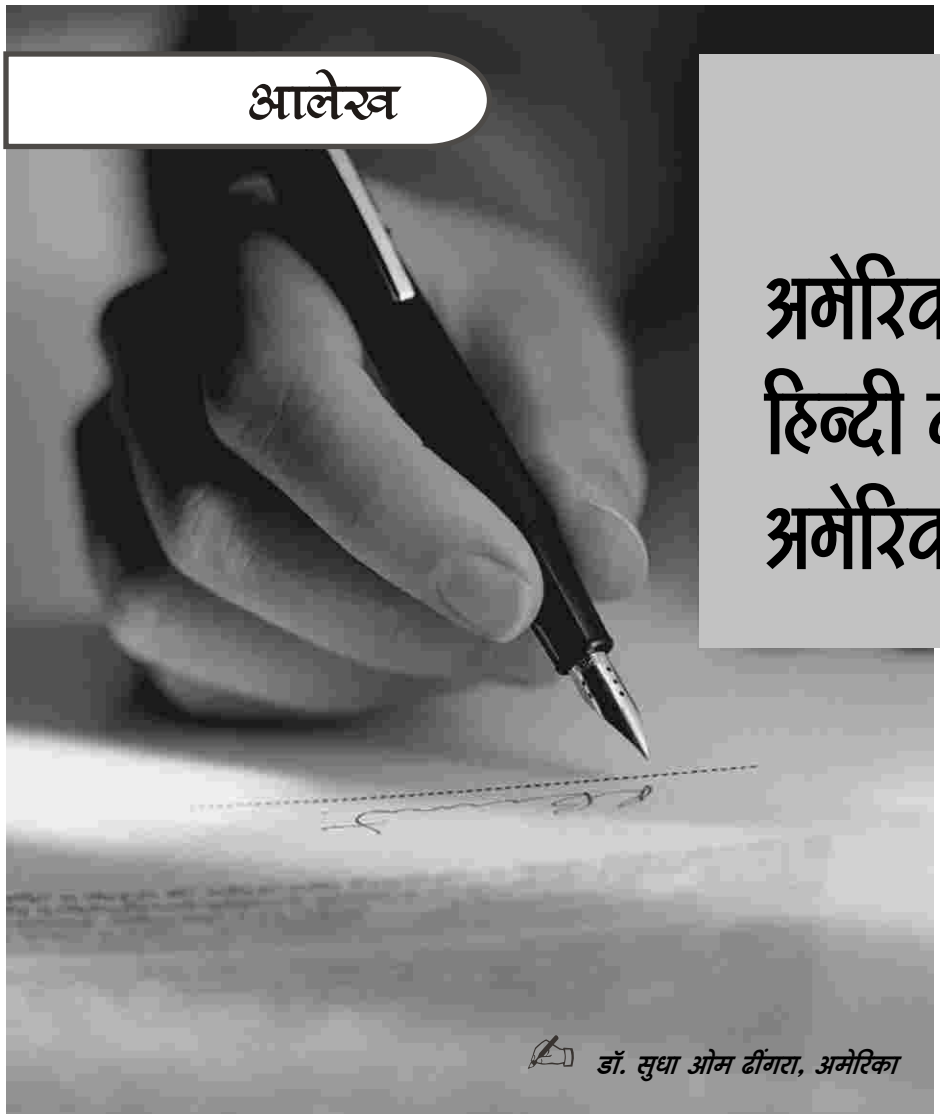

अमेरिका के हिन्दी कथा साहित्य में अमेरिकी परिवेश

✍ डॉ. सुधा ओम ढींगरा, अमेरिका

अमेरिका का हिन्दी कथा साहित्य साठ के दशक में प्रकाश में आया, जब त्रिवेणी (उषा प्रियंवदा, सोमा वीरा और सुनीता जैन) ने विश्व को अमेरिका के कथा साहित्य से परिचित करवाया। साठ के दशक में त्रिवेणी की लेखनी में अमेरिकी जीवन की झलक साफ दिखाई देती है। इन्होंने भारतीय हिन्दी साहित्य का परिचय एक ऐसे कथा संसार से करवाया जो इससे पहले हिन्दी साहित्य में अनजाना था। सोमा वीरा की कहानी 'लॉनड्रोमैट' अमेरिकी जीवन की कई झाँकियाँ प्रस्तुत कर जाती है। नए परिवेश को अपनाते और उसमें समाते हुए बड़ा भाई अमेरिका की मशीनी ज़िन्दगी जीने लगता है और अतीत एवं रिश्तों के प्रति बेजान हो जाता है। लोंड्रोमैट की मशीनों के माध्यम से लेखिका ने अमेरिकी परिवेश, जीवन शैली, जीवन मूल्यों, सोच और कल्चर की भिन्नता दर्शाई है। विष्णु प्रभाकर जी ने इनकी पुस्तक 'धरती की बेटी' की भूमिका में लिखा है --- 'सरलता इनकी कहानियों की बहुत बड़ी शक्ति है। अपने पैरों पर खड़े हो कर उन्होंने अन्धकार में राह बनाई है। ये सब अनुभूतियाँ और नई दुनिया के नए चित्र उनकी कहानियों को और भी सशक्त बना देंगें।'

डॉ. महीप सिंह ने अपने लेख 'विदेशों में साहित्य सृजन. जो १५ सितम्बर २००५ को दैनिक जागरण में प्रकाशित हुआ, उसमें लिखा है -- 'अमेरिका में हिन्दी लेखकों की संख्या काफी बड़ी है। मैं ऐसे अनेक लेखकों को जानता हूँ जो भारत में सक्रियता से लेखन करते थे। अमेरिका ने उन्हें धीरे-धीरे निगल लिया।' अमेरिका ने उन्हें निगला नहीं वरन यहाँ की पृष्ठभूमि उनके लेखन के लिए उर्वर सिद्ध हुई और नई सोच, नए सामाजिक सरोकार, नई चुनौतियाँ उनकी कहानियों को नयापन दे ऊर्जित कर गईं। उन्हें एक बृहत्तर फ़लक मिला। इन तीन लेखिकाओं के अलावा साठ के दशक में डॉ. कमला दत्त, डॉ. श्याम नारायण शुक्ला, निर्मला शुक्ला आए और कहानियाँ लिखते रहे, इस बात की परवाह किए बिना कि उनकी रचनाएँ प्रकाश में आयेंगी या नहीं। साठ का दशक वह समय था जब अमेरिका में बहुत कम भारतीय आते थे और जो आते थे, उनमें से कई स्थानीय औरतों के साथ भावनात्मक तौर पर जुड़ जाते थे। फिर भारत जा कर माँ-बाप की ख़ुशी के लिए वहाँ भी शादी कर लेते थे। उसमें बहुत कुछ टूटा, जुड़ा बहुत कम। दो संस्कृतियों के मूल्यों का टकराव, पूर्व-पश्चिम का अन्तर, अंतर्द्वंद उस समय की कहानियों का मुख्य विषय था। डॉ. कमला दत्त की 'धीरा पंडित, केकड़े और

मकड़ियाँ', निर्मला शुक्ला की 'उलझन' और सोमा वीरा की 'लॉनड्रोमैट' कहानियों का मूल विषय यही है। साठ के दशक का अमेरिका उनकी कहानियों में साफ़ देख सकते हैं। कमला दत्त ने अपनी कहानी में भारतीय मूल की महिला को संबंधों के टूटने से हालात–परिस्थितियों में उलझी, भीतर से बिखरती स्थानीय पुरुष के मोहपाश में बंधती दिखाया है। भारत में परिवारों की मनः स्थिति का वर्णन भी बखूबी किया है। ऐसे किस्से अब भी यत्र–तत्र दिखाई देते हैं। पर लेखकों के केंद्र बिंदु बदल गए है। कई और विषय उनकी कहानियों में समाने लगे हैं।

सत्तर के दशक में अशोक कुमार सिन्हा, उमेश अग्निहोत्री, डॉ. आर.डी.एस. 'माहताब', ललित आहलूवालिया, पूर्णिमा गुप्ता, कमलेश कपूर, डॉ. उषा देवी विजय कोल्हटकर, अनिलप्रभा कुमार, रमेश चंद धुस्सा आए। उमेश अग्निहोत्री तथा डॉ. उषा देवी विजय कोल्हटकर बहुत चर्चित नाम हैं। डॉ. उषा देवी विजय कोल्हटकर हिन्दी के साथ–साथ मराठी में भी बराबर छपती हैं। उमेश अग्निहोत्री नाटकों के मंचन से भी जुड़े हैं। डॉ. उषा देवी विजय कोल्हटकर की कहानियाँ अमेरिकी परिवेश में ही फलती–फूलती हैं। 'बटर टॉफी और बूढ़ा डालर' और 'मेहमान' कहानियों में ऊषा जी ने पति–पत्नी के सम्बन्ध विच्छेद और पारिवारिक विघटन से उत्पन्न स्थितियों और बच्चों का अकेलापन बखूबी बुना है। घोड़े और टेडी बियर के साथ टूट चुके या टूट रहे परिवारों में पल रहे बच्चों की मानसिकता को उन्होंने उत्तम तरीके से उजागर किया है। उषा जी वर्षों से अमेरिका में रह रही हैं। अमेरिकी परिवेश और संस्कृति में गहरे उतरकर उनके पात्र जीते हैं। अनिल प्रभा कुमार की कहानी 'घर' तलाक के बाद बच्चों में उत्पन्न मानसिक असुरक्षा एवं अवसाद से घिरे पात्रों के ताने–बने से बुनी गई सशक्त रचना है। उनकी अन्य कहानियाँ 'तीन बेटों की माँ', 'वानप्रस्थ', 'दिवाली की शाम', 'फिर से', 'उसका इंतज़ार', 'बहता पानी' भावनाओं से ओत–प्रोत पाठकों को बहा ले जाने वालीं कहानियाँ हैं, लम्बे समय तक याद रहने वालीं।

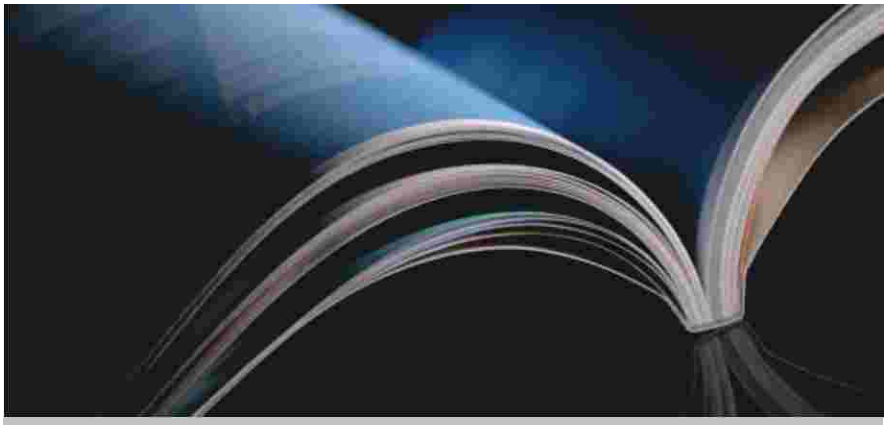

डॉ. महीप सिंह ने लिखा : 'अमेरिका में हिन्दी लेखकों की संख्या काफी बड़ी है। मैं ऐसे अनेक लेखकों को जानता हूँ जो भारत में सक्रियता से लेखन करते थे। अमेरिका ने उन्हें धीरे-धीरे निगल लिया।' अमेरिका ने उन्हें निगला नहीं वरन् यहाँ की पृष्ठभूमि उनके लेखन के लिए उर्वर सिद्ध हुई और नई सोच, नए सामाजिक सरोकार, नई चुनौतियाँ उनकी कहानियों को नयापन दे ऊर्जित कर गईं। उन्हें एक बृहत्तर फ़लक मिला। इन तीन लेखिकाओं के अलावा साठ के दशक में डॉ. कमला दत्त, डॉ. श्याम नारायण शुक्ला, निर्मला शुक्ला आए और कहानियाँ लिखते रहे, इस बात की परवाह किए बिना कि उनकी रचनाएँ प्रकाश में आयेंगी या नहीं।

अस्सी के दशक में जो लेखक अमेरिका आए उनमें सुषम बेदी, डॉ. शालिग्राम शुक्ला, सुधा ओम ढींगरा, डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शनी, स्वदेश राणा, रेणु राजवंशी गुप्ता, डॉ. विशाखा ठाकर, डॉ. सुरेश राय तथा वेद प्रकाश 'अरुण' हैं। सुषम बेदी का उपन्यास 'हवन' काफी चर्चित उपन्यास है। अमेरिकी परिवेश के आँचल तले उनका साहित्य काफी फला–फूला है। 'अवसान', 'अज़ेलिया के फूल', 'तीसरी दुनिया का मसीहा', 'खुल जा सिमसिम' कहानियों के पात्र इसका उदाहरण हैं। उनकी कई कहानियों के पात्र उनके लम्बे समय के प्रवास की देन हैं। हिन्दी कथा साहित्य में वे विशेष एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। रेणु राजवंशी गुप्ता, डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शनी, सुधा ओम ढींगरा तथा डॉ. शालीग्राम शुक्ला बराबर चर्चा में हैं। रमेश शौनिक लिखते हैं–– 'सुधा ओम ढींगरा की कहानियों से आप अमेरिका को जान और पहचान सकते हैं। इनकी कहानियों के पात्र अमेरिकी परिवेश में भोगे हुए यथार्थ से भीगे प्रतीत होते हैं। इनकी कहानियाँ 'कौन सी ज़मीन अपनी', 'टारनेडो', 'सूरज क्यों निकलता है', 'क्षितिज से परे', 'फन्दा क्यों?', 'एग्ज़िट', 'ऐसी भी होली' अमेरिकी समाज के सरोकारों, विद्रूपताओं, विसंगतियों को चित्रित करतीं संवेदनशील कहानियाँ हैं।'

प्रेम जनमेजय ने लिखा है –– 'सुधा ओम ढींगरा की कहानियों में प्रवासी मन के वह अनछुए कोनों का सहज संवेदनशील वर्णन है, जो अधिकांश प्रवासी रचनाकारों की रचनाओं में मशीनी तौर पर शब्दों का आकार ग्रहण कर जैसे स्वयं को प्रवासी साहित्यकार सिद्ध करवाने के मोह में अनुभवहीनता के साथ एक ही पटरी पर दौड़ते दिखाई देते हैं। सुधा की कहानियों के पात्र प्रवासी मन की जिंदगी के विभिन्न कोनों को जीते दिखाई देते हैं।'

रेणु राजवंशी गुप्ता का समस्त लेखन अमेरिका की भूमि पर ही जन्मा एवं फला-फूला। इसलिए लेखन में प्रवासी भारतीयों की विचारधारा, उपलब्धियां और संघर्षों का संपुट साफ झलकता है। डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शनी कहानियों के साथ-साथ उपन्यास भी लिखती हैं। 'रेत के घर', 'जलाक' उपन्यास, 'धूप' और 'सन्दर्भहीन' इनकी कहानियाँ बहुत चर्चित रही हैं। इनके पात्र सोच की पर्तों में गहरे उतरते, मानव मन की बारीक़ से बारीक़ गुत्थियाँ खोलते, कथ्य और शिल्प से सशक्त बुनावट लिए होते हैं।

नब्बे के दशक में अंशु जौहरी, डॉ. सरिता मेहता, प्रतिभा सक्सेना, बबिता श्रीवास्तव, राजश्री, कुसुम सिन्हा के नाम शामिल हैं। पर लेखकों में राजश्री तथा अंशु जौहरी की कहानियाँ ही चर्चित हुईं।

इला प्रसाद ने अपने लेख 'अमेरिका के हिन्दी कथाकार' (विश्व मंच पर हिन्दी : नए आयाम-२००७) में लिखा है -'यदि इन तमाम लेखकों के लेखन पर एक विहंगम दृष्टि डालें तो जो बातें सामने आती हैं, उनमें मुख्य यह कि अमेरिका आने के पश्चात भी इन सबने भारत और भारतीय परिवेश की कहानियाँ लिखी है और लिख रहे हैं। उदाहरण के लिए -राजश्री की - जिनकी कहानियाँ मूलतः स्त्री-पुरुष संबंधों के इर्द-गिर्द घूमती हैं -'मैं बोनसाई नहीं', 'मुक्ति और नियति', श्याम नारायण शुक्ल की 'दीक्षा-समरोह', 'कर्मफल', कुसम सिन्हा की 'माँ', प्रतिभा सक्सेना की 'फिर वह नहीं आई', अमरेन्द्र कुमार की 'ग्वासी' ऐसी ही कहानियाँ हैं। यह सहज स्वाभाविक भी है। क्या गाँवों से शहर को कूच कर गया लेखक आज भी गाँव की कहानी नहीं कह रहा है?'

सन दो हज़ार में जो लेखक उभर कर सामने आए, वे हैं-- डॉ. इला प्रसाद, अमरेन्द्र कुमार तथा सौमित्र सक्सेना। ये तीनों ही बहुत अच्छा लिख रहे हैं। इनका अपना एक पाठक

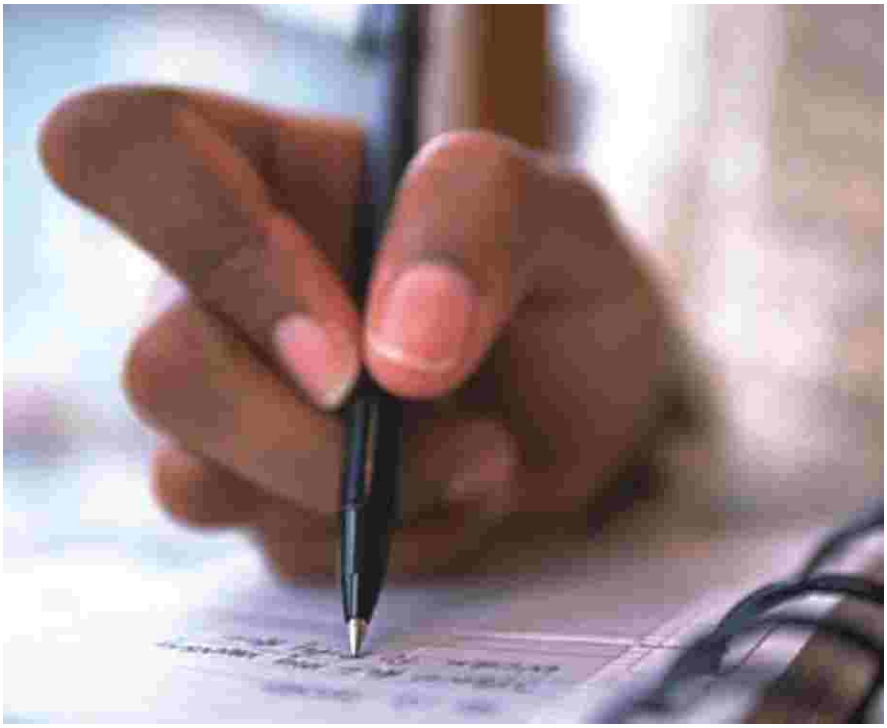

वर्ग है। इला प्रसाद की कहानियाँ 'उस स्त्री का नाम', 'मुआवज़ा', 'रोडटैस्ट', 'सेल', 'ई-मेल', 'वैसाखियाँ' अमेरिकी परिवेश में पनपी कहानियाँ हैं। भारत की पत्रिका 'शोध-दिशा' की अतिथि संपादक बन कर उन्होंने अमेरिका के प्रतिनिधि कहानीकारों पर दो अंक निकाले। अमरेन्द्र कुमार और सौमित्र सक्सेना युवा कथाकार हैं। डॉ. पुष्पा सक्सेना दो हज़ार के दशक में अमेरिका आईं। वे पहले से ही भारत में लिख रही थीं। स्तरीय पत्रिकाओं में छप रही थीं। अमेरिका प्रवास से पहले वे यहाँ आती-जाती रहतीं थीं। 'वर्जिन मीरा' कहानी उन्होंने उसी समय के दौरान लिखी थी। इसी दशक में रचना श्रीवास्तव एक और युवा लेखिका उभर कर सामने आ रही हैं जो लघु कथाएँ, कहानियाँ और बाल- साहित्य लिखती हैं। बाल-साहित्य पर इनकी खासी पकड़ है। शकुन्तला बहादुर और धनञ्जय कुमार भी अब कहानियों की ओर मुड़ रहे हैं। धनञ्जय कुमार और गुलशन मधुर द्वारा सम्पादित 'दिशांतर' के बाद अब 'कथांतर' अमेरिका के कहानीकारों पर सम्पादित दोनों की नई पुस्तक हैं। इस पुस्तक के बारे में प्रभाकर श्रोत्रिय लिखते हैं -- 'कथांतर इसलिए अर्थवान है कि इसमें संग्रहीत कहानियाँ केवल प्रवासी भारतीय लेखक ही लिख सकते थे, जिन्होंने उन अनुभवों को जिया है। कुछ भारतीय लेखकों ने भी विदेशों को रचने की कोशिश की है, परंतु वह उनकी संवेदना, चेतना और कला का भाग है- अनुभव का नहीं। यहाँ सभी कहानियाँ जो तनाव झेल रही हैं वे उनका शिल्प नहीं, कथ्य हैं। वे संबंधों का आतंक और जद्दोजहद उस तरह उतारकर नहीं फेंक सकी हैं जैसे पश्चिमी मनुष्य उन्हें उतार फेंकता है। अपने देश से मोह-भंग की पीड़ा भी उसी व्यक्ति को अधिक सालती है जो परदेश के अजनबीपन को धकेलने के लिए एक विशेष मोह से देश आया है-''कौन सी ज़मीन अपनी' या 'बहता पानी' जैसी कहानियों में इस आघात को देख सकते हैं। यह ठीक है कि रचनात्मक संस्कार के लिए केवल प्रतिभा और परिश्रम नहीं, एक

भारतीय जीवन दर्शन में पनपती पश्चिमी सोच अब विदेशों में रचे जा रहे साहित्य पर सम्पादकों, आलोचकों और पाठकों को सोचने और समझने पर मजबूर कर रही है। पश्चिमी जीवन मूल्यों और भारतीय जीवन मूल्यों के बीच की खाई बहुत बड़ी थी जो स्वयं भारत में ही कम होती जा रही है। भारत में जिसे आत्म- प्रदर्शन और आत्म-विज्ञापन की संज्ञा दी जाती है, वह अमेरिका में अपने आप को उद्वरित करना कहलाता है।

रचनात्मक संसार भी चाहिए जो भाषिक परिवेश, सहृदय समाज और प्रकाशन के अवसरों से मिलकर बनता है। इसके अभाव में जो भी रचा जा सकता है वह इस संग्रह में है। 'इसकी का जन्मदिन' की कोटि की कला और संवेद से गुँथी शायद ही कोई कहानी यहाँ हो। परंतु संग्रह यह प्रभाव अवश्य छोड़ता है कि हर कथाकार अपनी मूल सीमाओं का अतिक्रमण न कर पाने की संस्कारगत चेतना से जूझते हुए पश्चिमी जीवन को रच रहा है। वह निश्चय ही औपचारिक नहीं, उसकी आंतरिक बाध्यता है। भारत को ऐसे बहुमूल्य प्रवासी लेखकों को अपने सृजन–स्मरण में शामिल करना चाहिए ताकि भाषा की रचनात्मकता को व्यापक वैश्विक आयाम मिल सके।

सन २००८ में अंजना संधीर द्वारा सम्पादित 'प्रवासी आवाज़' अमेरिका के ४४ कहानीकारों को अपने में समेटे, हिन्दी साहित्य को समृद्ध कर रही है। अमेरिका की भगौलिक स्थिति ऐसी है कि सारे लेखक फैले हुए हैं। अंजना जी ने सबको एक साथ हिन्दी साहित्य जगत में प्रस्तुत किया। पहली बार अमेरिका के 44 कहानीकार पाठकों के सामने आए। उनका यह प्रयास बेहद सराहनीय है।

'वर्तमान साहित्य', 'रचना समय', 'शब्द योग', 'साक्षात्कार', 'राजभाषा मंजूषा' और 'प्रवासी संसार' ने प्रवासी रचनाकार विशेषांकों में अमेरिका के कई रचनाकारों की रचनाएँ संकलित की हैं।

राजी सेठ के शब्दों में–– 'भाषा के घेरे से परे रह कर, अपनी भाषा की, देश से परे रह कर देश की, परिवेश से परे रह कर देश के रंग–रूप, तीज–त्यौहार, मिथक इतिहास को रचने की प्रेरणा इन्हें कौन देता होगा? चेतना में ऐसी ललक कैसे पैदा होती होगी? जबकि वातावरण में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो ऐसे विकल्पों या ऐसी अंतर्धाराओं को पोषित कर सके।' डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शनी लिखती हैं – 'ऐसे विरोधाभासों के बीच पनपता अमेरिकी हिन्दी साहित्य और उस पर अपने ही देश से मिली उपेक्षा, प्रकाशकों एवं संपादकों की अस्वीकृतियाँ, डालर बटोरने की लालसाएं, भला कहाँ पनपने देंगी –इस बंजर भूमि में उगी हुई लताओं को। उन्हें सतही और भ्रष्ट भाषा का साहित्य कह कर नाकारा जाता है। हाँ, जो डालर –संस्कृति की दौड़ में समर्थ रहे, वे गाहे–बगाहे छपते रहे, पर सबकी ना वह समर्थ होती है, ना अस्वीकृतियों में से राह बनाने की चाह। इस पर स्थानीय गुटों की भेड़िया चाल अलग।'

भारतीय जीवन दर्शन में पनपती पश्चिमी सोच अब विदेशों में रचे जा रहे साहित्य पर सम्पादकों, आलोचकों और पाठकों को सोचने और समझने पर मजबूर कर रही है। पश्चिमी जीवन मूल्यों और भारतीय जीवन मूल्यों के बीच की खाई बहुत बड़ी थी जो स्वयं भारत में ही कम होती जा रही है। भारत में जिसे आत्म– प्रदर्शन और आत्म–विज्ञापन की संज्ञा दी जाती है, वह अमेरिका में अपने आप को उद्वरित करना कहलाता है। जीवन दर्शन का यह मूलभूत अन्तर अमेरिकी हिन्दी साहित्य का मूल कथ्य भी है। इस कथ्य को अब वहाँ नकारा नहीं, समझा जा रहा है। भारत में तेज़ी से बदलते मूल्य, जीवन दर्शन और हिन्दी साहित्य, अमेरिका की आज़ाद सोच के आज़ाद विचारों में पनप रहे साहित्य को स्वीकारने लगा है। डॉ. महीप सिंह ने ठीक कहा है –– 'मुझे लगता है विदेशों में रचे जा रहे साहित्य के प्रति हमें अधिक जागरूक होना चाहिए और उच्च स्तर के हिन्दी अध्ययन में, उन्हें वशिष्ट स्थान भी प्राप्त होना चाहिए।'

सन्दर्भ पुस्तकें : प्रवासी आवाज़ (डॉ. अंजना संधीर), विश्व मंच पर हिन्दी : नए आयाम (विदेश मंत्रालय)

सन्दर्भ लेख : अमेरिका के हिन्दी कथाकार (डॉ. इला प्रसाद), अमेरिका में हिन्दी साहित्य (डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शनी)

वैश्विक मुद्दों से जोड़ें हिन्दी को

✍ ओंकारेश्वर पांडेय, भारत

लंदन के हीथ्रो हवाई अड्डे पर उतरते समय मेरे मन में द ग्रेट ब्रटेन की एक बहुत ही अलग-सी छवि थी। अंग्रेज़ों की धरती। गोरे लोग। गोरी छोरियां। लग रहा था, कोई हिंदी नहीं समझेगा। अंग्रेज़ी में बात करनी पड़ेगी। मन को फिर तसल्ली सी हुई कि चलो इतनी अंग्रेज़ी तो सीख ही ली है। मॉस्को का हाल तो नहीं होगा। वहाँ तो कोई साइन बोर्ड तक अंग्रेज़ी में नहीं था। इंटरनेट खोलो तो वो भी रूसी भाषा में ही खुलता है। किसी तरह बस इमारतों के रंग, पेड़ों औरप्रतीक के अन्य चिह्नों को याद कर वापस अपने होटल पहुँच पाते थे।

यही सब सोचता विमान से बाहर निकला तो कस्टम से गुज़रने के लिए लंबी लाइन लगी थी। विदेशों से आने वाले यात्रियों के लिए जांच की ज़रूरी प्रक्रिया। आश्चर्य हुआ कि अन्य देशों की तरह डिप्लोमैटस के लिए अलग काउंटर नहीं था। अलग काउंटर था सिर्फ यूके एंड ईयू (ब्रिटेन तथा यूरोपियन यूनियन) के नागरिकों के लिए। एयरपोर्ट दिल्ली के नये अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे से काफी छोटा। मन में कुछ गर्व सा महसूस हुआ। चलो, हम लंदन से कम से कम इस मामले में तो बेहतर हो गये हैं। लाइन बहुत लंबी थी। सारे काउंटर भरे हुए। काउंटर्स पर गोरे कम भारतीय और अन्य मूल के लोग अधिक थे। मैंने अपनी पत्नी से कहा ये लोग इतना धीरे-धीरे क्यों जांच कर रहे हैं। पत्नी कुछ कहतीं, इससे पहले ही वहाँ खड़ा एक सुरक्षाकर्मी बोला आस्ते-आस्ते हो जाएगा, चिंता मत कीजिये। मैं चौंका, आस्ते-आस्ते? मन में सवाल उठा कि यह शब्द तो बिहार की भोजपुरी का है। तो क्या ये आदमी बिहारी है? मैंने पूछा तो उसने कहा नहीं जनाब, मैं तो कराची से हूँ। कराची में ढेर सारे बिहारी मुसलमान रहते हैं। इसलिए उनकी भाषा में बिहारी शब्द होने पर कोई आश्चर्य नहीं।

बहरहाल लंदन हवाई अड्डे पर उतरते ही हिंदी सुनकर बहुत सुकून हुआ और अंदर तो नज़ारा और भी खुशगवार था। भारतीय लोगों

> प्रवासी भारतवंशी हिंदी को लेकर क्या कर रहे हैं, यह भी पता चला। पर कहीं दिल में कुछ निराशा सी भी हुई, हिंदी को विश्व भाषा बनाने का आंदोलन क्या ऐसे ही चलेगा? क्या ऐसे हम अपनी युवा पीढ़ी को हिंदी से जोड़ पाएंगे? और क्या गर्व से कह पाएंगे कि हम हिंदी-हिंदुस्तानी हैं?

से इतना भरा होगा लंदन, ये मैंने नहीं सोचा था। कई सड़कों पर एक लाइन से भारतीय होटलों और रेस्तरांओं को देखकर कई बार लगा कि हम दिल्ली के पहाड़गंज से गुज़र रहे हैं।

हम बर्मिंघम में हो रहे यू.के. हिन्दी क्षेत्रीय सम्मेलन में हिस्सा लेने आये थे। हम यानी मैं और मेरी धर्मपत्नी विजया भारती। विजया 18 भाषाओं में गाने वाली भारत की चर्चित लोकगायिका हैं। मंच और टीवी की सुपरिचित नाम। रोज़ सुबह टीवी पर एंकर भी करती हैं। आयोजन गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय ने किया था। प्रोफेसर कृष्ण कुमार और श्री आनंद कुमार की ओर से निमंत्रण था। विजया का लोकसंगीत का कार्यक्रम था और मुझे कवि सम्मेलन में हिस्सा लेना था। पर मैं कविता से ज्यादा हिंदी पर चर्चा में भाग लेने में ज्यादा उत्सुक था। बड़ी उम्मीदें मन में स्वाभाविक रूप से थीं। पता था कि कई देशों के हिंदी के बड़े विद्वान आ रहे हैं। उनसे हिंदी भाषा को लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे नये कार्यों-प्रयासों की जानकारी मिलेगी।

24 से 26 जून, 2011 तक बर्मिंघम के ऐस्टन विश्वविद्यालय के प्रांगण में संपन्न यू.के. क्षेत्रीय हिन्दी सम्मेलन के आयोजन में गीतांजलि बहुभाषी साहित्यिक समुदाय के अलावा भारतीय उच्चायोग, लन्दन और प्रधान कोंसुलावास, बर्मिंघम का पूरा संरक्षण प्राप्त था। यही नहीं इसमें गीतांजलि ट्रेंट, चौपाल, एचसीए वेल्स, सैंडवेल कन्फेडरेशन आफ़ इंडियन्स, संत निरंकारी मंडल यू.के., कथा यू.के., भारतीय भाषा संगम, नेशनल काउंसिल ऑफ हिन्दू प्रीस्टस, संस्कृति यू.के. और डीयूटी नीदरलैण्ड का सहयोग था।

सम्मेलन का कार्य विवरण यार्क विश्वविद्यालय के श्री महेंद्र वर्मा एवं कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के श्री ऐश्वर्ज कुमार ने तैयार किया। कुल मिलाकर २८ पर्चे भी आये, हालांकि २७ ही सम्मेलन कार्य विवरण में जा सके। और विषय या तो हिंदी की मौजूदा स्थिति, हिंदी शिक्षण प्रशिक्षण के आयाम और समस्याएं, या देवनागरी लिपि का गुणगान था। कई आलेख अच्छे लगे। खासकर डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल का विश्व में हिंदी की अवस्था और स्थिति। ब्रिटेन से लेकर हॉलैंड तक हिंदी के हाल का पता चला। प्रवासी भारतवंशी हिंदी को लेकर क्या कर रहे हैं, यह भी पता चला। पर कहीं दिल में कुछ निराशा सी भी हुई, हिंदी को विश्व भाषा बनाने का आंदोलन क्या ऐसे ही चलेगा? क्या ऐसे हम अपनी युवा पीढ़ी को हिंदी से जोड़ पाएंगे? और क्या गर्व से कह पाएंगे कि हम हिंदी-हिंदुस्तानी हैं?

वास्तविक सवाल यह है कि हम क्या कर रहे हैं? हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने को लेकर जो आंदोलन भारत में चल रहा था, वह भी कहीं थम सा गया है। हिंदी को विश्व भाषा बनाने की बात भी पीछे छूटती दिख रही है। लंदन के जिस हाउस ऑफ कॉमन्स में इंदु शर्मा कथा सम्मान आयोजित किया गया था, वहाँ आगंतुक द्वार पर ब्रिटिश संसद के बारे में परिचय देने वाली तमाम पुस्तिकाएं दुनिया की अनेक भाषाओं में छपी रखी थीं, पर हिंदी में कुछ भी नहीं था। पता चला कि वहाँ भारतीय मूल के करीब 8 सांसद हैं। एक मिले भी, पंजाबी थे, पर हिंदी में उन्होंने बात की, अच्छा लगा। अगर वे लोग चाहें तो ज्यादा समस्या नहीं होगी और वहाँ हिंदी में भी पुस्तिकाएं छपने लग जाएंगी। पर यह प्रयास कौन करेगा? दिव्या माथुर के वातायन में जावेद अख्तर और प्रसून जोशी जैसे नामचीन लोग आये। शानदार कार्यक्रम हुआ। ऐसे अवसरों का लाभ हिंदी के आंदोलन को आगे बढ़ाने में भी उठाना चाहिये।

प्रोफेसर कृष्ण कुमार बताते हैं कि देश की भौतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के लगभग ३ दशकों के उपरान्त भारतवंशियों के एकीकरण के लिए 1975 में पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन वर्धा में संपन्न हुआ और इसके लगभग ३ दशक बाद ही, यू.के. में वर्तमान हिन्दी एवं संस्कृति अधिकारी श्री आनंद कुमार की संकल्पना से, 2002 में पहला क्षेत्रीय हिन्दी सम्मेलन बुडापेस्ट (हंगरी) में हुआ था। विश्व में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ सार्वभौमिक भारतीयों का एकीकरण ही दोनों का मुख्य उद्देश्य रहा है।

निश्चित रूप से हिंदी भाषा भारतीयों को जोड़ने वाली सबसे मजबूत कड़ी साबित हुई है। हम काम के लिए चाहे अंग्रेजी में बोलें, लिखें, झाड़ें, पर जब भावनाओं की बात आती है, दिल का मामला आता है, देश का मामला आता है, दादी की याद सताती है, माँ-पिताजी याद आते हैं, घर गाँव याद आता है, होली, दीवाली और दशहरा आता है, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, बाबा भोले नाथ और संकट में जब हनुमान याद आते हैं, तो हनुमान चालीसा हमारे कंठ से बरबस फूट पड़ता है। हिंदी हम हिंदुस्तानियों के दिल में है और रहेगी। इसे कोई निकाल नहीं सकता।

इसकी संख्या, विश्व भाषा बनने की योग्यता आदि को लेकर भी संदेह नहीं होना चाहिए। क्योंकि अब इसमें कोई संदेह नहीं रह गया है कि विश्व में हिन्दी का खूब प्रचार-प्रसार हुआ है। डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल के आंकड़ों के अनुसार विश्व में सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली - समझी जाने वाली भाषा बन चुकी है हिन्दी। संख्या के रूप में यह लगभग एक अरब के करीब आती है जिसने चीन की भाषा मैन्डरीन को भी पीछे छोड़ दिया है।

आंकड़े बताते हैं कि आज अमरीका के 51 कॉलेजों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है, जिसमें कुल 1430 छात्र पढ़ रहे हैं। अमरीका के ही पेनिन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय में एमबीए के छात्रों के लिए हिंदी का दो साल का कोर्स भी चल रहा है। अमरीका में सन 2008 तक हिंदी पढ़ाने वाले स्कूल 200 थे और छात्र 4000 के लगभग। ब्रिटेन, फ्रांस, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, जर्मनी, सिंगापुर, पोलैंड, कोरिया, और जापान आदि करीब 60 देशों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है। बीबीसी की हिंदी सेवा बंद होते-होते

आंकड़े बताते हैं कि आज अमरीका के **51** कॉलेजों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है, जिसमें कुल **1430** छात्र पढ़ रहे हैं। अमरीका के ही पेनिन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय में एमबीए के छात्रों के लिए हिंदी का दो साल का कोर्स भी चल रहा है। अमरीका में सन **2008** तक हिंदी पढ़ाने वाले स्कूल **200** थे और छात्र **4000** के लगभग। ब्रिटेन, फ्रांस, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, जर्मनी, सिंगापुर, पोलैंड, कोरिया, और जापान आदि करीब **60** देशों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है।

रह गयी, तो कृपा की गयी, ये मत समझिये। ये सेवा बंद होती तो ज्यादा नुकसान ब्रिटेन का ही होता। भारतीय आकाश तो तमाम तरह के चैनलों से भरा हुआ है। करीब 700 चैनल भारत में चल रहे हैं।

अंग्रेजी, अरबी जैसी कुछ भाषाओं को छोड़कर दुनिया की कितनी भाषाएं इतने देशों में बोली समझी, और पढ़ाई जाती हैं?

लेकिन कष्ट होता है, जब ब्रशेल्स के यूरोपियन यूनियन मुख्यालय में हिंदी का कोई वजूद नहीं दिखायी देता। संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में नहीं दिखायी देता। वहाँ यूएन द्वारा मान्यता प्राप्त छह भाषाओं अंग्रेजी, फ्रांसीसी, चीनी, रूसी, स्पैनिश तथा अरबी में हिंदी को कब शामिल किया जाएगा, इसको लेकर एक तेज़ और ज़ोरदार आंदोलन की आवश्यकता है।

पर हम कहां खो गये हैं? कविता में, कहानी में?

हिंदी का आंदोलन आश्चर्यजनक रूप से शांत हो गया है। हमारे विद्वान अंग्रेज़ी के विद्वान होते जा रहे हैं। बुद्धिजीवी अपनी बौद्धिक संपदा से अंग्रेज़ी को समृद्ध कर रहे हैं। क्यों?

क्योंकि नये विचार नहीं आ रहे। चिंतन इतिहास का गौरव गान करने में ही मस्त हो जाता है। वास्तव में हम अब कुछ नहीं सोचते। कुछ नहीं बोलते और डॉ. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कहा करते थे कि –

जब इंसान मर जाता है
तो वह कुछ नहीं बोलता,
कुछ नहीं सोचता.
और
जो कुछ नहीं सोचता
कुछ नहीं बोलता,
वह भी मर जाता है.
क्या हम इसी तरह मर जाएंगे?

अब सवाल ये है कि हम सोचें तो क्या सोचें। क्या बोलें। बहुत कुछ है, सोचकर तो देखिये। चलिए आज तो अपनी भाषा को लेकर ही सोचें। हम हिंदी जानते हैं। अच्छी तरह जानते हैं। अंग्रेजी भी जानते हैं, पर लिखते क्या हैं... कविता, कहानी। किसी तरह छप छपा गया तो बहुत नाम प्रतिष्ठा मिल जाती है, बस इतना काफी है, यही सोचते हैं न?

नहीं, इतना भर मत सोचिए। लिखिये। कविता कहानी, उपन्यास सब लिखिये। पर कुछ ऐसा भी लिखें जो समूचे भारतवर्ष को गौरवान्वित कर दे। हमारे लेखन में नया विचार होना चाहिए। इसका बड़ा महत्व है।

हमारे भारतीय लेखकों की रचनात्मकता से अंग्रेजी समृद्ध हुई है। भारत ने आर.के. नारायण और सलमान रुश्दी जैसे अनेक प्रख्यात अंग्रेजी लेखक दिए हैं। आज अंग्रेजी को भारत में एक अन्य भारतीय भाषा के रूप में देखा जाता है। पर हिंदी कहाँ है। हिंदी के पुराने लेखकों के नाम की माला हम कब तक जपेंगे। और सवाल सिर्फ हिंदी में साहित्य लेखन का ही नहीं है।

आज ज़रूरत है कि हम हिंदी को वैश्विक

मुद्दों से जोड़ें और बतायें कि जिन प्रश्नों के हल विश्व समुदाय ढूंढ रहा है, उस पर हमारे क्या विचार हैं। विभिन्न प्रकार की हिंसा और आतंकवाद से जूझता विश्व असुरक्षा और अशांति में जी रहा है। हम भी जूझ रहे हैं। पर हताश नहीं हैं। क्योंकि उससे निपटने की नीति और शक्ति है हमारे पास। हिंसा के विरुद्ध अहिंसा का गांधी का विचार आज भी प्रासंगिक है। आज कई देश खूनी हिंसा के भयावह दौर से गुजर रहे हैं। पर हमारे पड़ोसी बौद्ध धर्म को मानने वाले भूटान ने पूरी शांति से राजतंत्र को लोकतंत्र में बदल कर कीर्तिमान रच दिया और उसके विपरीत वामपंथी विचारधारा के साथ हिंसा के रास्ते लोकतंत्र की स्थापना करने वाला नेपाल अब भी अशांत और अस्थिर है।

विषय अनेक हैं। ग्लोबल वार्मिंग से जूझ रही दुनिया को वृक्षों की पूजा करने वाला भारत पर्यावरण संरक्षण का पाठ पढ़ा सकता है। देवी की पूजा करने वाला भारत महिलाओं को मान-सम्मान ही नहीं सिर आसमान पर बिठाने का स्नेहिल संदेश भी दे सकता है। मिलिनियम डेवलपमेंट गोल के सभी मुद्दों पर भारत के क्या विचार हैं, यह हमारे लेखन का विषय क्यों नहीं होना चाहिए।

भारत तो चिंतकों विचारकों का ही देश रहा है। हमने दुनिया को क्या-क्या नहीं दिया। सब याद रखिये। उससे आप गौरव की अनुभूति करते हैं। और उससे सबको ऊर्जा और प्रेरणा मिलती है।

हम ये कैसे भूल सकते हैं कि हमारे पूर्वजों ने कहा था – कृण्वन्तो विश्वम्आर्यम् यानी सम्पूर्ण विश्व को श्रेष्ठ बनाएंगे। यह भी कहा था – वसुधैव कुटुम्बकम् यानी संपूर्ण वसुधा एक कुटुम्ब यानी परिवार है। और साथ ही उन्होंने ये भी कहा था – स्वदेशो भुवनत्रयम – तीनों लोक हमारे लिए स्वदेश हैं।

ऐसी ही अनेक उदात्त भावनाओं को लेकर भारत ने सम्पूर्ण विश्व को सुख, समृद्धि हेतु कला, कौशल तथा दर्शन का अवदान दिया और उसका बौद्धिक नेतृत्व कर जगद्गुरु कहलाया।

नहीं भूलें कि हमारा महान भारत अनेक प्रकार के उपासना पंथों की जन्म भूमि रहा है। हमारे सनातन हिंदू धर्म को दुनिया मानने लगी है। हमारे बौद्ध धर्म को दुनिया के अनेक देश अपना कर धन्य हो गये। हमने दुनिया को मानव जाति को पालना सिखाया। हमारा देश एक दो नहीं सैंकड़ों भाषाओं की जन्मभूमि है। जिसमें वह संस्कृत है, जो ज्ञान का अगाध भंडार आज भी है। वह हिंदी है, जिसे देश की ४३ फीसदी आबादी तो बोलती ही है, २७ फीसदी अन्य भाषाभाषी भी इसे समझते हैं। वास्तव में मानवता के इतिहास में जो भी मूल्यवान एवं सृजनशील सामग्री है, उसका विशाल और अतुलनीय भंडार अकेले हमारे भारत में है। ये राम और कृष्ण की पुण्य धरती है। यह एक ऐसी भूमि है जिसके दर्शन के लिए सब लालायित रहते हैं। सोनिया गांधी जब इटली की मामूली इंटरप्रेटर एंटोनियो माइनो थी। तब उनके दिमाग में भारत की छवि एक ऐसे दूर देश की थी जहाँ बकौल सोनिया जंगल, हाथी, साधु आदि रहते थे।

पर उनकी एक सहेली ने उनसे कहा था, नहीं सोनिया भारत वहाँ है, जहाँ ईश्वर का निवास है।

यह भारत हज़ारों वर्षों तक दुनिया में जगद्गुरू के रूप में माना गया। समृद्ध इतना था कि सोने की चिड़िया कहा जाता रहा।

हमारे इस भारत को विदेशियों ने जी भर के लूटा। पिछले १५०० वर्षों में मुगलों आदि के बर्बर हमलों से लेकर और अंग्रेजों के १९० वर्षों के शासन में देश का इतना आर्थिक शोषण हुआ कि सोने की ये चिड़िया कंगाल हो गई। पर हमने आज़ादी पायी। एक नये विचार की वजह से। विचार क्या था। संपूर्ण स्वराज्य। गांधी ने एक शब्द दिया कि हमें चाहिए आज़ादी। सुभाष चंद्र बोस ने कहा- तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा। ये क्रांतिकारी विचार था। देशभक्तों ने खून दिया। गांधी ने अहिंसा का नारा दिया। तो लोग उनके साथ सत्याग्रह पर भी बैठ गये। एक गर्म विचार और दूसरा नरम विचार। दोनों की मिली जुली रणनीति कामयाब रही। और हमें मिल गयी आज़ादी।

ये हवा, ये धरती, ये आकाश, ये चांद, सूरज और तारे- सब एक विचार हैं। विज्ञान एक आकाश गंगा खोज कर खुश होता है तो सौ नयी आकाश गंगाओं का पता चलता है और वह चौंकता है। भारत नहीं चौंकता, क्योंकि ब्रह्मांड के रहस्यों को जितना हमारे ऋषि-मनीषियों ने समझा उतना आज का विज्ञान भी कहाँ समझ पाया है।

बराक ओबामा दिल्ली आए तो हिंदी में नमस्ते कहकर भारतीयों का प्यार पाने की कोशिश की। हमारे अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री से जानने की कोशिश की कि दुनिया आर्थिक मंदी से कैसे निपटे। हम समझते हैं कि वे भारत से बहुत कुछ सीख सकते हैं। हमने दुनिया को वैसे भी काफी कुछ दिया है। शून्य से लेकर दशमलव तक, अंकगणित से लेकर कालगणना तक। अंतरिक्ष के रहस्यों से लेकर विमान की परिकल्पना तक। और भाई साहब, ये सब अंग्रेजी में नहीं लिखा गया था। संस्कृत में लिखा गया, जिसे हम आज पढ़ना, बोलना, समझना कठिन समझते हैं। हिंदी तो बहुत सरल है। लिखने पढ़ने और बोलने में भी। कोशिश तो करिये और कुछ नया करिये। आप आईटी में आगे हैं। कई अन्य क्षेत्रों में आगे हैं। क्यों न अपने ज्ञान को हिंदी में लाएं। हिंदी को समृद्ध बनाएँ।

आइये, हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा और विश्वभाषा बनाने के लिए नये सिरे से आंदोलन चलाएँ, कम से कम लोग ये तो नहीं कहेंगे न कि--

इलाही क्या खाक कर गये,
एमए किया नौकरी की,
और मर गये।

इतिहास

कृष्ण कुमार यादव
पोर्टब्लेयर

इतिहास बँटने लगा है
छोट-छोटे टुकड़ों में
यह हमारा इतिहास,
यह तुम्हारा इतिहास

इतिहास की किताबों में
नहीं दिखती अब
एकता-अखंडता की भावना
इतिहास पुनर्लेखन की आड़ में
बस उभारा जाता है
जाति, धर्म, क्षेत्र का इतिहास

इतिहास के पन्नों पर
गिद्ध-नजर गड़ाये
हर वर्ग के मठाधीश
इनका वश चले तो
लटका दें अपनी तख्ती
हर महापुरुष के चेहरे पर
और कैद कर दें उन्हें
अपनी तिजोरी में
कि, कहीं वे
दल-बदल न कर लें।

एक अंतर्द्वंद्व

■ सर्वेश अस्थाना, भारत

एक अंतर्द्वंद्व, मन में बंद।

इस तरफ दायित्व की पावन शिखा
उस तरफ आकंठ आकर्षण दिखा
रोकता है पाँव प्रतिपल आत्मा का द्वार
किन्तु कर देता विलग मन प्रण का इक ज्वार

खौलता मकरंद, मन में बंद।

चल रहा है युद्ध कौरव पाण्डवों का
दाँव पर अस्तित्व अपने बान्धवों का
या उन्हें अस्तित्व है अनमोल देना
या समय के भाव उनको तोल देना

टूटता सा छंद, मन में बंद।

ढूँढ़ना होगा मुझे इस प्रश्न का उत्तर
है असंभव ये नहीं शायद बहुत दुष्कर
है अगर देनी ऊँचाई पीढ़ियों को
भूमि पर झुकना पड़ेगा सीढ़ियों को

तोड़ कर अनुबंध, मन में बंद।

बागवान

■ अलका सैनी, भारत

खिल गया पूर्ण जगत उद्यान
माली कहो या कहो 'बागवान'
आमों पर मंजरी है भरपूर
कोयल की पुकार भी मगरूर
सब का प्रिय है बसंत का त्यौहार
पूरे यौवन पर तितलियों का व्यवहार
मालिन भी जागते-जागते सो गई
धरती के स्वर्ग में कहीं खो गई
कर्ता अपने सृजन को निहार रहा
पुष्पों की सुगंध में विहार रहा
नवजीवन, नवरस तरंगों से गूँज रहा
भंवरा आलौकिक फूलों पर विचर रहा
सृष्टि हो गई है उर्जावान
सप्तरंगी प्रकाशमय है आसमान
पथिक जाते-जाते है रुक गया
घने वृक्ष तले थककर बैठ गया
मोर बदली का संदेशा दे रहा
पीली सरसों पर जग पनप रहा
बाग़-बगीचे नवछटा में मदमस्त
पशु-पक्षी प्रेम-रस में है व्यस्त
देवताओं का दिखे प्रसन्नचित मुखमंडल
मिट्टी, पानी, हवा अन्नदाता का भूमंडल
अमृत बरसा रहा सृष्टि का भगवान्
धर्म निभा रहा धरती का 'बागवान'

निर्झरणी

■ भगवत शरण, कैनेडा

वह अलबेली स्वर्ण सजीली चंचल गतिवाली सी
इठलाती मंजू मोहनी मृदुल भाव रुपाली सी
वह निर्झरणी उछल हिय में चलती मतवाली सी
प्रातः में आनन्दित करती रूप किरन हरियाली सी।

संध्या में रख रूप अनोखा लिखती पदावली सी
वही उर्मियाँ शांत भाव से सोती शांत कली सी
मन मोहक लगती इतनी जब निर्झर से इठलाती
हिरदय कुञ्ज में शब्द जगाती सूफी कव्वाली सी।

वन उपवन उद्यानों को भी वह पोषित करती है
धरती की तृष्णा हर लेती जब चलती उतावली सी
धनी निर्झरी निर्झर के संग-संग तुम उठती गिरती
देती हो आनन्द सभी को बन मनहर उजियाली सी।

दर्शन मात्र तुम्हारा करके हिय शांत भाव आ जाता
शीतल कर देती नयनों को जब रहती बाल लली सी
पंख पखेरू थके हुए सब आ जाते निकट तुम्हारे
तेरा पी पाकर खिल उठती उनकी साँसें फुलवारी सी।

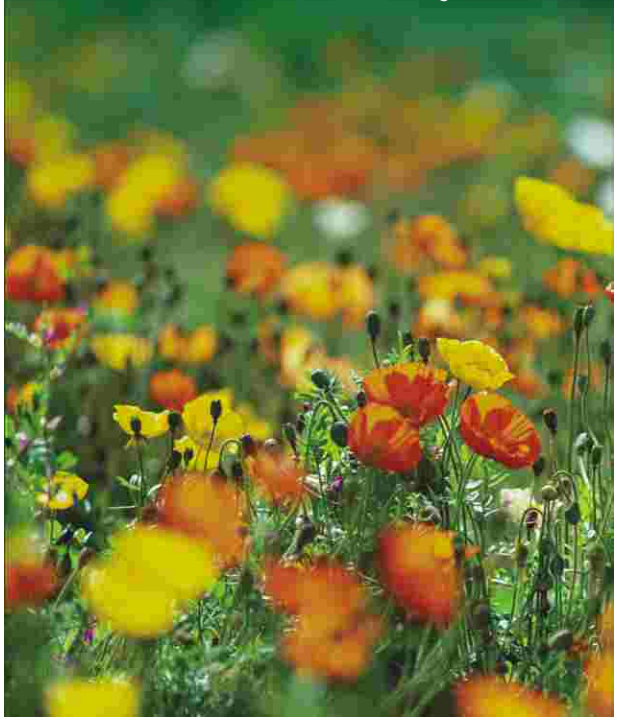

और सामूहिक

■ अमित कुमार सिंह, नीदरलैंड

ये शब्द सुनते ही
मन में कौंध उठती है,
किसी अबला की चीख,
किसी की करुण पुकार,
किसी की उजड़ती लाज,
किसी का हृदयविदारक रुदन,
किसी निरीह नारी की गिड़गिड़ाहट,
दानवी चेहरों वाले
शैतानों की खिलखिलाहट,
मानवों का अमानवीय कर्म
पर क्या स्त्री की
लज्जाहरण का यह
दुष्कर्म इतना,
सुलभ और आम हो गया है
कि हमारे समाज में
हमारा चित्त 'सामुहिक'
शब्द सुनते ही
इसकी कल्पना
कर लेता है?
अगर यह सच है,
तो सचमुच ही
हमारा समाज
पतन की ओर
अग्रसर है,
और हम चरित्रहीनता
की ओर...
सुनकर जब 'सामुहिक'
शब्द, मन में कौंधे
श्रमदान, सेवा, प्रतिज्ञा,
और परोपकार का कर्म,
तभी होगा हमारे
देश का कल्याण और
सार्थक होगा आदर्श
'अमित' समाज का मर्म।

ग़ज़ल

प्रकाश अर्श, भारत

ग़मों से दूर जाना चाहता हूँ,
मैं फ़िर से मुस्कुराना चाहता हूँ।
मैं बच्चा बन के मां की गोद से फ़िर,
लिपट के खिलखिलाना चाहता हूँ।
पिता ही धर्म हैं ईमां हैं मेरे,
वहीं बस सर झुकाना चाहता हूँ।
जहां कोई खड़ा है राह ताकता,
वहीं फ़िर लौट जाना चाहता हूँ।
सुना है रूठ कर सुन्दर लगे हैं,
उसे गुस्सा दिलाना चाहता हूँ।
लहू का रंग मेरा इश्क जैसा,
मैं साँसें शाईराना चाहता हूँ।
ग़ज़ल होती नहीं बस वो मुकम्मल,
जिसे उसको सुनाना चाहता हूँ।

इश्क मोहब्बत आवारापन,
संग हुए जब छूटा बचपन।
मैं माँ से जब दूर हुआ तो,
रोया घर, आँचल और आँगन।
शीशे के किरचे बिखरे हैं,
उसने देखा होगा दर्पण।
परदे के पीछे बज-बज कर,
आमंत्रित करते हैं कंगन।
चन्दा, सूरज, पर्वत, झरना,
पावन पावन पावन पावन।
बिकता हुस्न है बाज़ारों में,
प्यार मिले है दामन दामन।
कौन कहे बिगड़े संगत से,
देता सर्प को खुश्बू चंदन।
दुनिया उसको रब कहती है,
मैं कहता हूँ उसको साजन।

■ **नित्यानंद 'तुषार', भारत**

जितने चेहरे देखे हैं
सारे तुझसे फीके हैं

तेरे ख़त के अक्षर भी
फूलों जैसे महके हैं

तेरी साँसों के हिस्से
इन साँसों में रहते हैं

तू जाने किस हाल में है
मेरे नयना भीगे हैं

तुझको इक दिन पाएंगे
ऐसा दिल से कहते हैं

तुझको याद नहीं हैं हम
हम तुझको कब भूले हैं

यूँ जीते हैं तेरे बिन
हम किश्तों में मरते हैं।

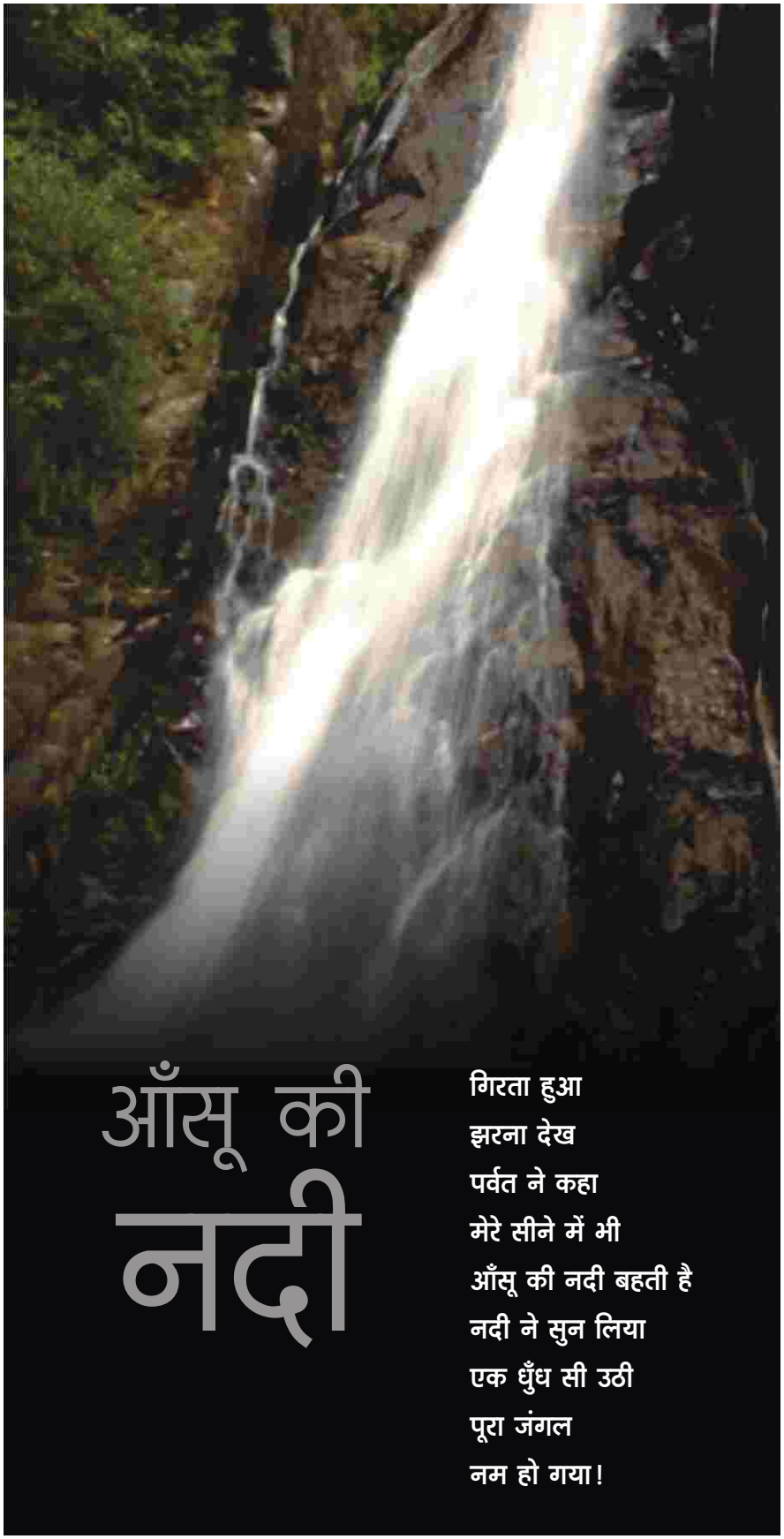

आँसू की नदी

गिरता हुआ
झरना देख
पर्वत ने कहा
मेरे सीने में भी
आँसू की नदी बहती है
नदी ने सुन लिया
एक धुँध सी उठी
पूरा जंगल
नम हो गया!

गर्भ में तुम्हारे!

ओंधे मुँह
गिरे अम्बर का
चकनाचूर बदन,
फटी बिवाइयों और
सूख चुके
फफोलों की अकड़न
आ! ढंक दूँ –
सफ़ेद झक बादलों के
कातर डैनों से
आ! सींच दूँ तुझे
समेटकर मेरे
रोमछिन्द्रों में बचे कुछ
संभावित स्वेदजल से
ताकि
तुम्हारी देह पा जाए –
कुछ नमी
मेरी
भीगी संवेदनाओं से
और ऐसे में
संभव ही है
नवजात अंकुरण
गर्भ में तुम्हारे!

मिजाज़

तुम हो तो मौसम का
मखमली अहसास
गुदगुदाता है
जाने क्या बात हुई
मौसम का मिजाज़
कुछ बदल रहा है
ठहर-सी गई है लालिमा
एक कप चाय की प्याली में
जबकि सूरज
कब का ढल चुका है।

DON'T PAY THAT TICKET!

Al (Doodie) Ross
(416) 877-7382 cell

ROSS
LEGAL SERVICES

Former Toronto Police Officer,
28 Years Experience

Arvin Ross
(416) 560-9366 cell

We Can Help with all Legal Matters:

सच्ची सेवा करते हैं । ईश्वर से हम डरते हैं ॥

Traffic Offences
Summary Criminal Charges
Impaired Driving / Over 80
Accidents
Commissioner for Taking Affidavits
Criminal Pardon and / or a United States Border Waiver

95%
Success Rate!

16 FIELDWOOD DR.
TORONTO ONTARIO, M1V 3G4
OFFICE: (416) 412-0306
FAX: (416) 412-2113

Licensed by the Law Society of Upper Canada

Ross@RossParalegal.com www.RossParalegal.com ROSS LEGAL SERVICES

UNITED OPTICAL

WE SPECIALIZE IN CONTACT LENSES

- Eye exams
- Designer's frames
- Contact lenses
- Sunglasses
- Most Insurance plans accepted

Call: RAJ
416-222-6002

Hours of Operation

Monday – Friday: 10:00 a.m. to 7:00 p.m.
Saturday: 10:00 a.m. to 5:00 p.m.

6351 Yonge Street, Toronto, M2M 3X7
(2 Blocks South of Steeles)

भाषान्तर

नोबल पुरुस्कार विजयेत्री ज़िमबोस्का

की कविता का रमेश शौनक द्वारा हिन्दी रूपान्तर

हमारी इस बीसवीं सदी को
दूसरी सदियों से बेहतर होना था,
लेकिन अब तो यह होने का नहीं।
कुछ ही साल तो बचे हैं,
क़दम भी लड़खड़ा रहे हैं इसके,
और सांसें भी उखड़ी हुई हैं।

इस बीच बहुत कुछ हुआ है
जो होना नहीं चाहिए था,
और वह जो होना चाहिए था हुआ नहीं,
खुशियों और बहारों को क़रीब आना था,
आईं नहीं,
डर और ख़ौफ़ को पहाड़ों और घाटियों को
छोड़ कर जाने की बात थी,
सच्चाई को घर लौट आना था
झूठ से पहले,
और कुछ बातों का तो अब
कुछ काम ही न था –
जैसे भूख, जंग, वग़ैरह
मजबूरों की मजबूरी का लेहाज़,
भरोसा, और ऐसी ही और बातें।
और वो जिन्होंने जीने के मन्सूबे बनाए थे
उनका तो अल्लाह ही मालिक है।
अब तो न हिमाक़त पे हंसी आती है
और न दानाई पर रश्क,
अब उम्मीद भी वह कमसिन
दोशीज़ा न रही,
जो कभी हुआ करती थी।
ख़ुदा को एक ऐसे इन्सान की उम्मीद थी
जो नेक भी होगा और ताक़तवर भी,
लेकिन नेक और ताक़तवर
अब भी दो अलग बंदे हैं।
'तो कैसे जिएं हम?'
किसी ने मुझ से खत में पूछा है
यही सवाल पूछना था मुझे भी तो!

पता यह चला,
कि हमेशा की तरह
इन्हीं अहम सवालों से
हमारा अनाड़ीपन साफ़ झलकता है।

विगत स्मृति

■ विजया सती,
ऐल्ते यूनिवर्सिटी, बुदापैश्त

याद आती है –
अपने विश्वविद्यालय के
गलियारों की हलचल,
किताबों की दुनिया में
रमता हुआ मन!
स्थिर, संपन्न, संकल्प से भरा
निर्विकार प्रसन्न अंतर्मन!
सफल, उदार संगी-साथी –
स्वार्थ भाव से जूझते
अनुदार प्रसंगों की उदासी!
सोचती थी
शांत-स्निग्ध उन दिनों को
पीछे छोड़
आगे बढ़ आई हूँ –
फिर न होगा वैसा मन!
पर आज के एकांत में बैठ
नज़र डालती हूँ
वर्तमान के तापमान पर
तो डोल उठते हैं आसपास
वे वासंती बयार-से दिन!

नव अंकुर

प्रकृति

■ रेखा भाटिया, अमेरिका

ज़िंदगी में कई कारण होते हैं
दर्द अपना पीने और जीने के लिए
तपते रेगिस्तान और ढलते सूरज के साये में
डाली पर बैठा इक पंछी आस लगाये बैठा है
तिन-तिन करता तिनकों को बीनता

घोंसला बनाए बैठा है
डाली की तलहटी में छिपा सर्प
मन में तूफ़ान दबाये मौके की
तलाश में बैठा है

एक पहर गुजरते ही पंछी
जान को निगल जाएगा
जीवन जीने का एक और मौका ढूँढ लेगा
फूलों के बिस्तर में सिमटा भौंरा
ओंस की एक बूँद का दीवाना है

ठंडी रात के साये में जन्मती ओस
सूरज खिलते ही प्राणदाता बन जाएगी

सरसर रेत पर रेंगती छिपकली
बिन आहट के पग चलती

भौरें को निगल जाने को है
हूट मारता हर दिशा में
सर घुमाता उल्लू

शिकार की तलाश में है
डाली पर बैठा पंछी
तलहटी में छिपा सर्प
तहों में सिमटी छिपकली
एक तलाश है प्राण भरने के लिए
एक कारण ही बहुत है जीने के लिए।

एक असुरक्षित अहं की। उम्मीद कायम रहे मानव!

■ दीपक 'मशाल', यू.के.

विपत्ति के वातावरण में
जंतु मशीनों पर निर्भर होता प्राणी...
कंक्रीट के अभ्यारण्य में
होमोसेपियंस से ज्यादा
इनके कलपुर्जे अभ्यस्त होते दिखते हैं
तथाकथित महानगरों में प्रकाश के व्युत्क्रमानुपाती
स्वप्नों के छिलके उतारने को व्याकुल
क्षण-भंगुर जीवन...

वास्कोडिगामा और कोलंबस के
जहाज़ों के मस्तूल
और उनमे लगे दिशासूचक यन्त्र
मनुष्यता को यहाँ तक तो ले आये
अब जाने किस दिशा में ले जाएँ...

एडमंड हिलेरी का ऐतिहासिक पर्वतारोहण
गागरिन का भेद देना धरती की कक्षा को
कर आना बाहर की सैर
मशीन ने ही तो बनाया संभव आदम के बेटों के लिए

गणना करने के लिए
कम पड़ने लगे जब अँगुलियों के पोर
जब भोजपत्र ना रहे पर्याप्त
मस्तिष्क की उपज को सहेजने को
तब केलकुलेटर से कम्प्यूटर तक
जो तुमने रचे
जो किये आविष्कृत
अब तुम्हारे अन्दर के कोणों में उजागर कालेपन को
मिटाने को तुम निर्भर हो
उस अपने ही सृजन पर

वो कालिख अब बर्फ-सी सफेदी में
भले ना बदली जा सके
मगर आगे उगने वाली कारोंचों
उनको जन्मने वाले
बड़ी लौ के लम्पों को मिटा तो सकती है...
उन्हें रोक सकती है तुम्हारे इतिहास पर कालिख मलने से

तुम्हारी उपज..
तुम्हारी मशीन..
ढूंढ सकती है, पहचान सकती है
छाँट सकती है भीड़ में से झूठ के सिपहसालार
अशांति के रहनुमा
लालच के सरदारों को...
उम्मीद कायम रहे मानव!

निर्णायक

■ अनिल प्रभा कुमार
अमेरिका

एक हाथ में भाला और दूसरे में तराज़ू उठाए
हमारी तरफ़ बढ़ते आते हैं वो लोग
और कहते हैं कि तुम्हें तोलेंगे हम।

क्वींच कर मारते हैं भाला
और बिद्ध करके
गिरा देते हैं वो
फिर कहते हैं,
कितने गिरे हुए हो तुम।

सिर उठाने की क़ोशिश में
हम देखते हैं ऊपर,
वो कहते हैं
कितने छोटे हो तुम?
फतवे दे-दे कर
वो बिद्ध करते जाते हैं
और हम वही होते जाते हैं
जो-जो वो कहते हैं।

फिर अचानक हम अपना अक़्स देखते हैं
किसी के ईमानदार आइने में।
खड़े होकर क्वींच लेते हैं भाला
और तराज़ू अपने हाथ में लेकर
पूछते हैं उनसे,
तुम कौन होते हो हमें आंकने वाले
हमें आंक सको,
इतना सत्य कहां है तुममें?

देखते हैं वो तो कहीं हैं ही नहीं
वह तो सिर्फ़ छाया थी

नाग देवता

◆ *सुधा भार्गव, भारत*

नन्हीं सी एक चिड़िया थी। नाम था उसका -सुनहरी। सूरज की किरणें जब उस पर पड़तीं, पंख उसके सोने की तरह चमकने लगते।

वह जामुन के पेड़ पर रहती थी। जब कोई उसके पास से गुजरता, वह खुशी से नाच उठती, चीं-चीं करके डाल-डाल फुदकती। कोई बच्चा आराम करने के लिए जामुन के पेड़ के नीचे रुक जाता तो चिड़िया कुतर-कुतर कर जामुन उसकी जेबों में भर देती। बच्चा गूदा-गूदा खाता, गुठली फ़ेंक देता। इतने में चिड़िया दूसरी जामुन टपका देती---बच्चा उछल कर उसे लपक लेता। चिड़िया उसकी कलाबाजी को देख झूम उठती। ऐसा लगता- पेड़ चारों तरफ से आनंद की लहरों से घिरा हुआ है।

पेड़ से कुछ ही दूरी पर सांप की एक बाँबी थी। वह उसमें रहता और अक्सर चिड़िया को देखा करता। सोचता -- यह न जाने क्यों इतनी खुश रहती है।

एक दिन वह चिड़िया से बोला --- सुनहरी, तुम हमेशा हँस-हँस कर गाती रहती हो। मुझे तो मुस्कराना तक नहीं आता। तुम्हारा स्वर सुनकर हर कोई गर्दन उठाकर ऊपर ताकने लगता है ---मुझे तो देखते ही बच्चे-बूढ़े डरकर भागने लगते हैं।

मुझे दूसरों की संगति में ऐसा लगता है मानो आकाश के सितारे नीचे उतर कर झिलमिला रहे हों। मगर तुम--तुम तो उन पर फुफकारते हो या उन्हें डस लेते हो। तभी तो तुम्हें देखते ही सब डर जाते हैं। तुम्हारा यों गुस्सा करना क्या ठीक है ? सुनहरी बोली।

यह सोचना मेरे साथ अन्याय करना है। मैंने जो माँ-बाप से सीखा वही तो करता हूं। दूसरों को डराने से मेरा मन भी बहल जाता है।

वाह भाई! वाह! तुम्हारा तो मन बहल गया और दूसरे की जान पर बन आई। तुम स्वार्थी----केवल अपने ही बारे में सोचते हो। अपने स्वभाव में बदलाब लाओ। वरना---खतरनाक समझकर मौका पाते ही तुम्हें----लोग पत्थरों से कुचल देंगे।

नाग तो उसकी बातों से घबरा गया। पर उसकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि अपनी आदतें कैसे सुधारे!

वह सुनहरी के सामने दिल खोल बैठा।

दीदी अब तुम्हीं बताओ -- फुफकारना कैसे छोड़ूं। बचपन में जो आदतें बन जाती हैं वे आसानी से जाती नहीं ---चाहे वे अच्छी हों या बुरी। कसूर न होते हुए भी मैं सजा भुगत रहा हूं। सब मुझसे नफरत करते हैं, दूर रहते हैं।

अच्छा एक काम करो--कल से तुम अँधेरा होते ही मेरे गीत सुनने के लिए आना लेकिन उजाले में नहीं। दिनभर तो लोगों का आना-जाना लगा रहता है। तुम्हें देखकर बेकार परेशान हो उठेंगे।

चिड़िया की बात सुनकर नाग का चेहरा उतर गया। दुखी मन से अपनी बाँबी में जाकर सो गया।

दूसरे दिन से वह रोज शाम को रेंगता हुआ आता--पेड़ के नीचे मग्न होकर चिड़िया का मधुर गीत सुनता। उसकी मिठास उसके तन-मन में ऐसी समाई कि वह फुफकारना भूल गया।

एक रात सुनहरी गाती रही---नाग सुनता रहा। न वह सोई न वह सोया। सबेरा हो गया--लोगों ने देखा, एक काला नाग आँख बंद किये ध्यान मग्न है। बस फिर क्या था उसे नाग देवता समझकर सब प्रणाम करने लगे। बच्चे-बच्चे को भरोसा हो गया कि सांप उनका कोई नुकसान नहीं करेगा।

चिड़िया की अच्छी संगति में रहकर सांप ने अपने बुरे स्वभाव से हमेशा को छुटकारा पा लिया। अब वह दुष्ट नाग से नाग देवता बन गया था। ◆

लघुकथाएँ

चादर

◆ *सुकेश साहनी, भारत*

दूसरे नगरों की तरह हमारे यहाँ भी खास तरह की चादरें लोगों में मुफ्त बाँटी जा रही थीं, जिन्हें ओढ़कर टोलियाँ पवित्र नगर को कूच कर रही थीं। इस तरह की चादर ओढ़ने-ओढ़ाने से मुझे सख्त चिढ़ थी, पर मुफ़्त चादर को मैंने यह सोचकर रख लिया था कि इसका कपड़ा कभी किसी काम आ जाएगा। उस दिन काम से लौटने पर मैंने देखा सुबह धोकर डाली चादर अभी सूखी नहीं थी। काम चलाने के लिए मैंने वही मुफ़्त में मिली चादर ओढ़ ली थी। लेटते ही गहरी नींद ने मुझे दबोच लिया था।

आँख खुली तो मैंने खुद को पवित्र नगर में पाया। यहाँ इतनी भीड़ थी कि आदमी पर आदमी चढ़ा जा रहा था। हरेक ने मेरी जैसी चादर ओढ़ रखी थी। उनके चेहरे तमतमा रहे थे। हवा में अपनी पताकाएँ फहराते जुलूस की शक्ल में वे तेजी से एक ओर बढ़े जा रहे थे। थोड़ी-थोड़ी देर बाद पवित्र पर्वत के सम्मिलित उद्घोष से वातावरण गूँज उठा था। विचित्र-सा नशा मुझपर छाया हुआ था। न जाने किस शक्ति के पराभूत मैं भी उस यात्रा में शामिल था।

इस तरह चलते हुए कई दिन बीत गए पर हम कहीं नहीं पहुँचे। दरअसल हम वहाँ स्थित पवित्र पर्वत के चक्कर ही काट रहे थे।

हम कहाँ जा रहे हैं? आखिर मैंने अपने आगे चल रहे व्यक्ति से पूछ लिया।

वह पवित्र पर्वत ही हमारी मंजिल है। उसने पर्वत की चोटी की ओर संकेत करते हुए कहा।

हम वहां कब पहुँचेगे?''

क्या बिना पवित्र चढ़ाई चढ़े उस ऊँचाई पर पहुँचना सम्भव होगा? मैंने शंका जाहिर की।

इस पर वह बारगी सकपका गया, फिर मूंछें ऐंठते हुए सन्देह भरी नज़रों से मुझे घूरने लगा।

तभी मेरी नज़र उसकी चादर पर पड़ी। उस पर खून के दाग़ थे। मेरे शरीर में झुरझुरी-सी दौड़ गई। मैंने दूसरी चारों पर गौर किया तो सन्न रह गया- कुछ खून से लाल हो गई थीं और कुछ तो खून से तरबतर थीं। सभी लोग हट्टे-कट्टे थे, किसी को चोट-चपेट भी नहीं लगी थी और न ही वहाँ कोई खून-खराबा हुआ था, फिर उनकी चादरों पर ये खून? देखने की बात यह थी कि जिसकी चादर जितनी ज्यादा खून से सनी हुई थी, वह इसके प्रति उतना ही बेपरवाह हो मूछें ऐंठ रहा था। यह देखकर मुझे झटका-सा लगा और मैं पवित्र नगर में निकल पड़ा।

लौटते हुए मैंने देखा, पूरा देश दंगों की चपेट में था, लोगों को जिन्दा जलाया जा रहा था, हर कहीं खून-खराबा था। मैंने पहली बार अपनी चादर को ध्यान से देखा, उस पर भी खून के छींटे साफ दिखाई देने लगे थे। मैं सब कुछ समझ गया। मैंने क्षण उस खूनी चादर को अपने जिस्म से उतार फेंका। ◆

सहानुभूति

डॉ. सतीशराज पुष्करणा, भारत

कहीं से स्थानान्तरण होकर आए नए-नए अधिकारी एवं वहाँ की वर्कशाप के एक कर्मचारी रामू दादा के मध्य अधिकारी के कार्यालय में गर्मागर्म वार्तालाप हो रहा था।

अधिकारी किसी कार्य के समय पर पूरा न होने पर उसे ऊँचे स्वर में डाँट रहे थे- 'तुम निहायत ही आलसी और कामचोर हो।'

'देखिए सर! इस तरह गाली देने का आपको कोई हक नहीं है।'

'क्यों नहीं है?'

'आप भी सरकारी नौकर हैं, और मैं भी।'

'चोप्प!'

'दहाड़िए मत! आप ट्रांसफर से ज्यादा मेरा कुछ भी नहीं कर सकते।'

'और वही मैं होने नहीं दूँगा।'

'आपको जो कहना या पूछना हो, लिखकर कहें या पूछें। मैं जवाब दे लूँगा। किन्तु इस प्रकार आप मुझे डाँट नहीं सकते। वरना...'

'मैं लिखित कार्रवाई करके तुम्हारे बीवी-बच्चों के पेट पर लात नहीं मारूँगा। गलती तुम करते हो। डाँटकर प्रताड़ित भी तुम्हें ही करूँगा। तुम्हें जो करना हो। कर लेना। समझे?'

निरुत्तर हुआ-सा रामू इसके बाद चुपचाप सिर झुकाए कार्यालय से निकल आया।

बाहर खड़े साथियों ने सहज ही अनुमान लगाया कि आज घर जाते समय साहब की खैर नहीं। दादा इन्हें भी अपने हाथ ज़रूर दिखाएगा, ताकि फिर वे किसी को इस प्रकार अपमानित न कर सकें।

इतने में से उन्हीं में से कोई फूटा- 'दादा! लगता है इसे भी सबक सिखलाना ही पड़ेगा।'

'नहीं रे! सबक तो आज उसने ही सिखा दिया है मुझे। वह सिर्फ अपना अफसर ही नहीं, बाप भी है, जिसे मुझसे भी ज़्यादा मेरे बच्चों की चिन्ता है।'

इतना कहकर वह अपने कार्यस्थल की ओर मुड़ गया। ◆

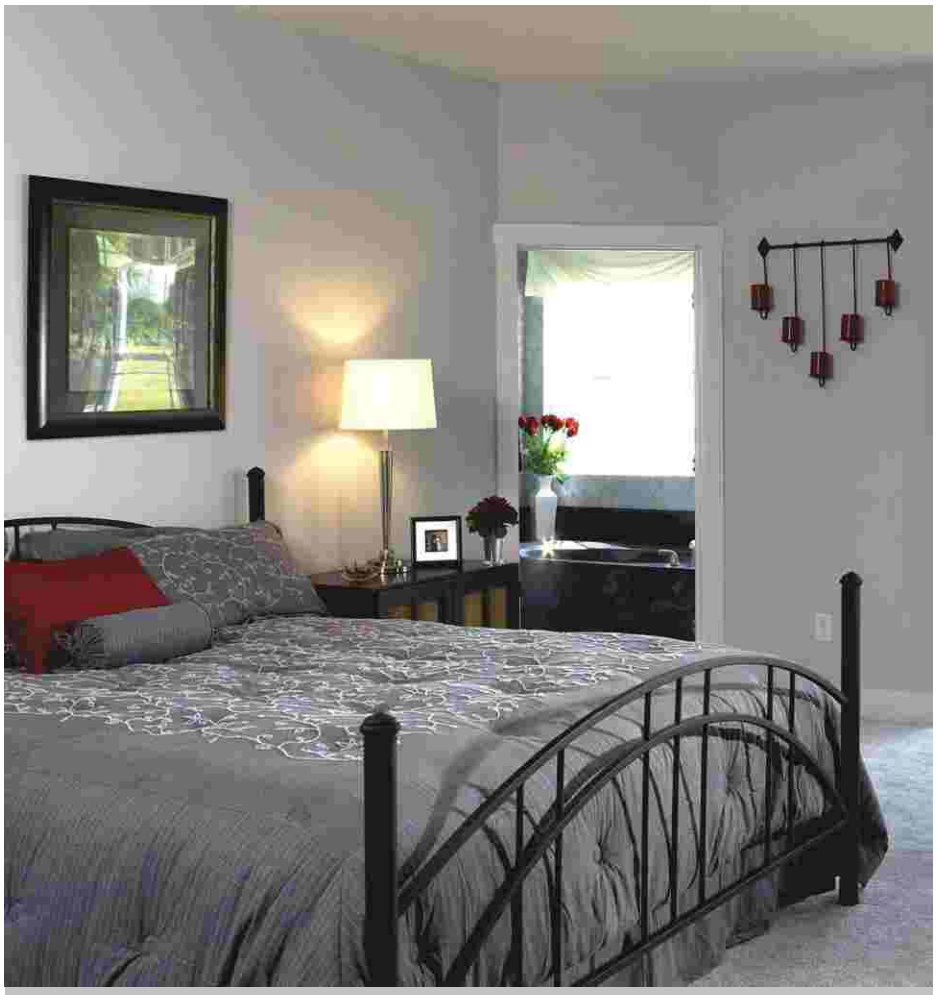

माँ का कमरा

◆ *श्याम सुन्दर अग्रवाल, भारत*

छोटे-से पुश्तैनी मकान में रह रही बुज़ुर्ग बसंती को दूर शहर में रहते बेटे का पत्र मिला- 'माँ, मेरी तरक्की हो गई है। कंपनी की ओर से मुझे बहुत बड़ी कोठी मिली है, रहने को। अब तो तुम्हें मेरे पास शहर में आकर रहना ही होगा। यहाँ तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होगी।'

पड़ोसन रेशमा को पता चला तो वह बोली, 'अरी रहने दे शहर जाने को। शहर में बहू-बेटे के पास रहकर बहुत दुर्गति होती है। वह बचनी गई थी न, अब पछता रही है, रोती है। नौकरों वाला कमरा दिया है, रहने को और नौकरानी की तरह ही रखते हैं। न वक्त से रोटी, न चाय। कुत्ते से भी बुरी जून है।'

अगले ही दिन बेटा कार लेकर आ गया। बेटे की ज़िद के आगे बसंती की एक न चली। 'जो होगा देखा जावेगा' की सोच के साथ बसंती अपने थोड़े-से सामान के साथ कार में बैठ गई।

लंबे सफर के बाद कार एक बड़ी कोठी के सामने जाकर रुकी।

'एक ज़रूरी काम है माँ, मुझे अभी जाना होगा।' कह, बेटा माँ को नौकर के हवाले कर गया। बहू पहले ही काम पर जा चुकी थी और बच्चे स्कूल।

बसंती कोठी देखने लगी। तीन कमरों में डबल-बैड लगे थे। एक कमरे में बहुत बढ़िया सोफा-सैट था। एक कमरा बहू-बेटे का होगा, दूसरा बच्चों का और तीसरा मेहमानों के लिए, उसने सोचा। पिछवाड़े में नौकरों के लिए बने कमरे भी वह देख आई। कमरे छोटे थे, पर ठीक थे। उसने सोचा, उसकी गुज़र हो जाएगी। बस बहू-बेटा और बच्चे प्यार से बोल लें और दो वक्त की रोटी मिल जाए। उसे और क्या चाहिए।

नौकर ने एक बार उसका सामान बरामदे के साथ वाले कमरे में टिका दिया। कमरा क्या था, स्वर्ग लगता था- डबल-बैड बिछा था, गुस्लखाना भी साथ था। टी.वी. भी पड़ा था और टेपरिकार्डर भी। दो कुर्सियाँ भी पड़ी थीं। बसंती सोचने लगी- काश! उसे भी कभी ऐसे कमरे में रहने का मौका मिलता। वह डरती-डरती बैड पर लेट गई। बहुत नर्म गद्दे थे। उसे एक लोककथा की नौकरानी की तरह नींद ही न आ जाए और बहू आकर उसे डाँटे, सोचकर वह उठ खड़ी हुई।

शाम को जब बेटा घर आया तो बसंती बोली, 'बेटा, मेरा सामान मेरे कमरे में रखवा देता।'

बेटा हैरान हुआ, 'माँ, तेरा सामान तेरे कमरे में ही तो रखा है नौकर ने।'"

बसंती आश्चर्यचकित रह गई, 'मेरा कमरा! यह मेरा कमरा!! डबल-बैड वाला!'"

"हाँ माँ, जब दीदी आती है तो तेरे पास सोना ही पसंद करती है। और तेरे पोता-पोती भी सो जाया करेंगे तेरे साथ। तू टी.वी. देख, भजन सुन। कुछ और चाहिए तो बेझिझक बता देना। उसे आलिंगन में ले बेटे ने कहा तो बसंती की आँखों में आँसू आ गए। ◆

पुस्तक समीक्षा

डॉ. प्रतिभा सक्सेना के महाकाव्य 'उत्तर-कथा' पर एक दृष्टि

'दो संस्कृतियों के बीच काश! पथ बनता'

✍ चंदन कुमारी, भारत

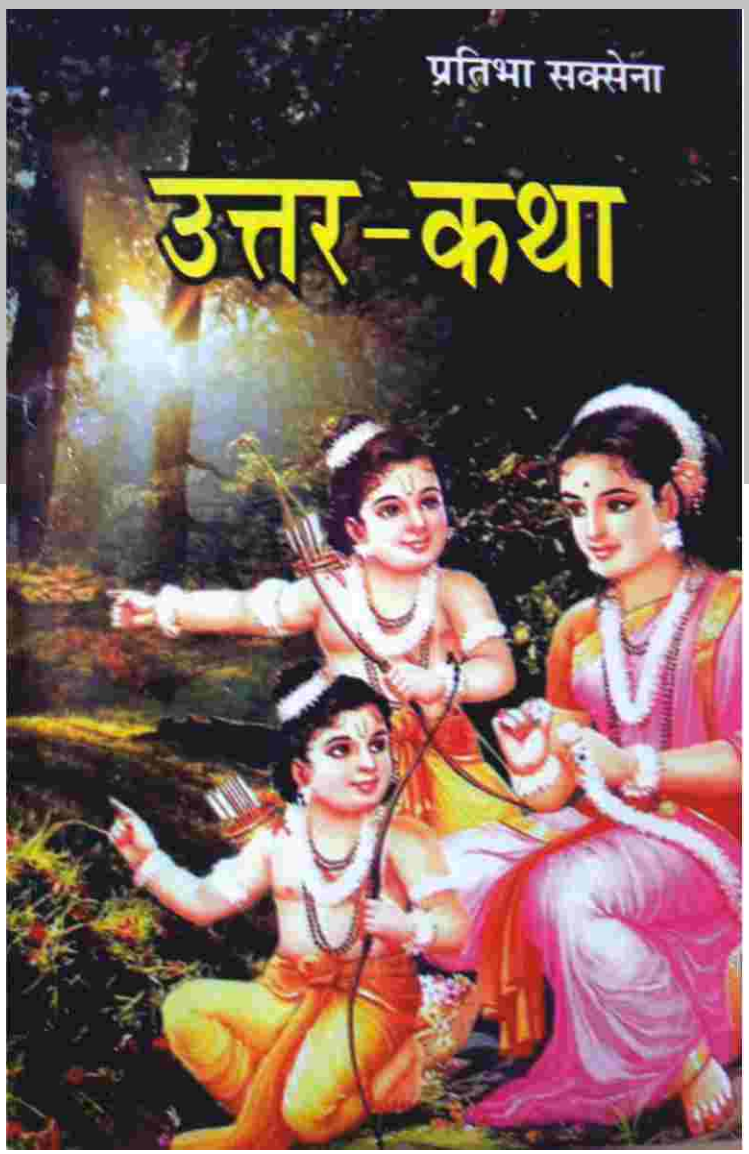

कवयित्री डॉ. प्रतिभा सक्सेना (1938) ने अपने प्रबुद्ध लेखन में काव्य के साथ ही साहित्य की अन्य कई विधाओं (नाटक, लघु-उपन्यास, कहानी, हास्य-व्यंग्य) को समेट रखा है। इनके रचना-संसार का फलक भारतीय साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं के साथ ही इंटरनेट एवं अमरीका के साहित्य जगत (विश्वा, हिन्दी चेतना, हिन्दी जगत) तक विस्तृत है।

उत्तर कथा (2010) में इन्होंने अपनी विद्वत्ता के साथ संवेदना का समन्वय करते हुए राम-कथा के अप्रकट या लुप्त तत्वों के उद्घाटन या पुनः प्रकाशन का निर्भीक प्रयास किया है। हालाँकि इस प्रयास को अपनी जगह निश्चित करने के दौर में जनमानस में व्याप्त आस्था से छोटी-मोटी टकराहट का सामना करना पड़ सकता है।

'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात्सत्यं अप्रियं' इस श्लोक को विस्मृत करते हुए ही 'साँच को आँच' कहाँ के सिद्धान्त पर अप्रिय एक पति ने अपनी निर्दोष पत्नी को वनवास दिया और यज्ञ अनुष्ठान के विधान को संपन्न कराने हेतु अपने वाम स्थान पर अपनी ही पत्नी की मूर्ति रक्खी और इस कृत्य पर सारा संसार उन्हें साधुवाद देने लगा। किन्तु पुत्रों की दृष्टि से किसी ने सोचा ही नहीं! उत्तर कथा में लव-कुश ने इस साधुवाद को तोड़ते हुए सभी की काल्पनिक उड़ान पर लगाम लगाई है।

प्रतीत होने वाले सत्य को उद्घाटित करने वाले सत्ताईस सर्गों वाले महाकाव्य उत्तर कथा का साहित्य जगत में सृजन संभव हो सका है।

रामकथा के मर्मज्ञ विद्वानों के लिए यहाँ उद्घाटित सत्य कदापि नवीन अथवा अप्रिय नहीं है, किन्तु महज़ अंध-श्रद्धा के साथ राम-कथा का गान करने वाले जन-समुदाय जिनके लिए वहां किसी तरह के आक्षेप की गुंजाइश नहीं, सब कुछ अनुकरणीय ही है, इन्हें यह अप्रिय ही नहीं संभवतः मिथ्या या अनर्गल प्रलाप प्रतीत हो। किन्तु असत्य रूपी आभास सत्य रूपी यथार्थ पर भला कब तक हावी रह पाएगा।

उत्तर-कथा में रूढ़ आदर्शों के मानक पर नहीं, व्यावहारिक नीति एवं सामाजिक न्याय के आधार पर राम-कथा के लगभग हर पात्र के चरित्रों एवं कार्य-नीतियों पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया गया है तथा अनुचित आचरण पर पात्रों के ही माध्यम से आक्षेप भी किया गया है। एक पति ने अपनी निर्दोष पत्नी को वनवास दिया और यज्ञ अनुष्ठान के विधान को संपन्न कराने हेतु अपने वाम स्थान पर अपनी ही पत्नी की मूर्ति रक्खी और इस कृत्य पर सारा संसार उन्हें साधुवाद देने लगा। किन्तु पुत्रों की दृष्टि से किसी ने सोचा ही नहीं! उत्तर कथा में लव-कुश ने इस साधुवाद को तोड़ते हुए सभी की काल्पनिक उड़ान पर लगाम लगाई है।

'ले लो सारे राजसी भोग, सिंहासन, सुख-साधन अपने,/साधनहीना, जीवन के कष्ट झेलती सीता-माँ ला दो!/व्यक्तित्व हमारा रचने को, जिसने जीवन भर ताप सहा,/निर्जीवन मूर्ति तुम्हीं रक्खो, जीवनमय जननी लौटा दो!' (पृ. 183)

इसी क्रम में राम की सर्वव्यापकता पर भी प्रश्नचिह्न लगाया गया है। 'यदि राम व्याप्त सचमुच ही तुम सबमें तो,/सुंदर से सुंदरतर, सुंदरतम करते।' (पृ. 205)।

राम द्वारा सत्य व न्याय के हित में लिए गए निर्णयों का परिणाम कितना सुन्दर रहा यह तो सर्वविदित ही है। स्वयं राम भी अपने भीतर की इस कमी को स्वीकारते नज़र आते हैं- 'मैं सोच न पाया, धैर्य न रख पाया,/वर्चस्व जताने पर ही तुल आया/वह क्यों झुकती अपना गौरव खो कर,/मिथ्यारोपण और व्यंग्य-वचन सुनकर?' (पृ.195-196)

राम द्वारा सीता को दिये गए अकारण वनवास की विकट स्थिति न सिर्फ़ आदर्श दाम्पत्य पर गिरी गाज है वरन् यह अनायास ही व्यक्ति विशेष की आंतरिक संवेदना के साथ जनसमुदाय की भावनाओं एवं प्रशासन व्यवस्था से भी जुड़ी जान पड़ती है। इस परिप्रेक्ष्य में कवयित्री की दुश्चिन्ता निश्चित ही विचारणीय है- 'कैसी स्थिति? सिद्धान्त न्याय हो गये व्यर्थ,/जड़मति, असंस्कृत जन के ही मत का महत्व?/क्या यही मोल होगा पत्नी की निष्ठा का,/उसके इस निःस्व समर्पण और प्रतिष्ठा का?' (पृ.204)

यहाँ एक कथित पुरुषोत्तम अपनी अर्द्धांगिनी के साथ खड़ा होने में सक्षम नहीं है जबकि कथा के घोषित निकृष्टतम पुरुष ने दांपत्य की मधुरता एवं अगाध विश्वास के सूत्र को आत्मसात् कर रखा है, जिसे कवयित्री इन शब्दों में रूप देती है - 'मन ने मन को पहचान लिया/फिर अविश्वास का कहाँ प्रश्न?' (पृ.61)

राजा जनक की पालित पुत्री के स्वयंवर से लौटे दशानन के समक्ष आशंकित एवं भयभीत मंदोदरी (पुत्री जन्म का रहस्य छिपाने के कारण) को रावण ने कोई दुःशब्द नहीं कहा वरन् उसने जो पति और प्रजाजन के हित अपने ममतामय उर पर पत्थर रखा उसके लिए उसे मान भी दिया और सहारा भी, यह कह कर कि, 'मैं उनमें नहीं कि शंकित होकर,/ कर न सकूँ, तुझको धारण,/अति दीन विवश कुंठित कर दूँ, बस अहमन्यता के कारण' (पृ.63)।

यहाँ रावण का पति रूप में आचरण उत्तम है, किन्तु यह भी सत्य है कि कोई भी व्यक्ति पूर्ण, सर्वश्रेष्ठ या संपूर्ण दोषरहित नहीं हो सकता। दशानन भी अपने प्रारंभिक जीवन में उन्मुक्त भोगकर्ता था। हालाँकि स्थिर चित्त होने पर उसे इस तथ्य का ज्ञान था कि उसका यह कृत्य अनुचित है। यहीं से उत्पन्न हुआ सीता-जन्म का रहस्य - उपेक्षित मंदोदरी द्वारा कलश में रखे तीक्ष्ण विष को पीकर। किन्तु ऋषि-रक्त से भरे उस कलश में पहले से ही अभिमंत्रित जल था जिसने रानी को मरण के बदले नवजीवन का वरदान दिया। रानी को प्राप्त यह वरदान उसके पति के अहित का हेतु न बन जाए यह सोच कर ही विकल हो जाती। रानी की विकलता का पारावार तब न रहा जब उसने सुना कि दशानन जानकी स्वयंवर में गए हैं - 'संततियाँ कहाँ-कहाँ जन्मी हैं जा कर/उन्मुक्त भोगकर्ता कैसे जानेगा?/वासना पूर्ति हित अपनी ही पुत्री की/लालसा जगी तो कैसे पहचानेगा?' (पृ. 62-63)

अद्भुत रामायण में भी उल्लेख है कि जब रावण अपनी ही पुत्री के वरण की इच्छा करेगा तो उसकी मृत्यु निश्चित है। ये पंक्तियाँ मंदोदरी की चिन्ता के साथ ही जार कर्म के अशोभनीय यथार्थ को भी प्रकट कर रही हैं। यथार्थ सिर्फ़ जार कर्म का ही नहीं वरन् उत्तर-कथा में आदर्श द्वारा व्यवहार में आए छल-कपट के फलस्वरूप उत्पन्न कुंठाग्रस्त जीवन के साथ ही मृत्यु के यथार्थ की भी चर्चा की गई है। मृत्यु को नवजीवन का आरंभ माना गया है। सामान्यतः सुख-दुख, प्रकाश-अंधकार परस्पर विपरीत हैं किन्तु कवयित्री की अंतर्दृष्टि ने इन्हें परस्पर साक्षेप माना है।

उत्तर-कथा का आरंभ ही वाल्मीकि के मन की उलझन - नारी और नर के मध्य कोई तात्विक अंतर है या नहीं- यहीं से हुआ है और वाल्मीकि बड़ी चतुरता से नारी की गरिमा को नर से श्रेष्ठ मान कर इस अबूझ पहेली को दरकिनार कर देते हैं। किंतु घायल क्रौंची की करुण पुकार से उत्पन्न अपने हृदय के उद्वेलन से स्वयं को कभी उबार न पाए और निर्जन में अकेली स्त्री को देख कर सहसा ही शर-बिद्ध क्रौंची की स्मृति मन में कौंध गई। फिर भी शान्त चित्त होकर जब कवि ने उनसे परिचय

पूछा, उनका उत्तर एकाकी परित्यक्त नारी का था, किन्तु वह अबला का नहीं था– 'जो हूँ सम्मुख हूँ ऋषिवर करें न कुछ संशय,/जिसने त्यागा उस माध्यम से हो क्यों परिचय?' (पृ. 31)

स्त्री के इस उत्तर ने ऋषि को सोच में डाल दिया – 'नारी की सौम्यशीलता पर कर गया वार/औचित्य, न्याय अथवा अबाध पुरुषाधिकार?' (पृ. 33)।

काश संपूर्ण पितृसत्ता अपने मस्तिष्क को खुला रखकर इस प्रश्न पर युक्तियुक्त विचार करें तो संभवतः कुछ रचनात्मक परिवर्तन हो। पितृसत्ता की दृष्टि में आदर्श नारी के स्थान पर प्रतिष्ठित सीता ही उत्तर–कथा में, स्त्री अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व एवं आत्मसम्मान की रक्षा हेतु किसी की मोहताज नहीं, यह स्थापित करती हैं।

'ये पुत्र और यह मुँदरी थाती थी,/ जिसको अब सौंप चुकी,/मैं हुई मुक्त,' कह कर सीता मुख मोड़ गई (पृ. 179)।

गोस्वामी तुलसीदास के राम अशोक वाटिका में सीता को संदेश भिजवाते हैं–'तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा जानत प्रिया एकु मन मोरा।/सो मन रहत सदा तोहि पाहीं/जानु प्रीति रस एतनेहि माहीं।।' और वही राम लंका विजय के पश्चात सीता को कटुवचन सुनाते हैं। राम के किस रूप को हम सत्य समझें। 'अद्भुत रामायण' की सीता हमें इस उलझन से साफ़ बचा ले गईं तथा राम की व्यंगोक्ति पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए, उन्हें अपना शौर्य प्रमाणित करने हेतु सहस्रमुख रावण से युद्ध करने को प्रेरित किया, इस युद्ध में राम, सीता बिन असमर्थ रहे, अंततः सीता ने ही संहार किया। युद्धरत सीता के रौद्र रूप की शांति हेतु राम द्वारा सीता की वंदना की गई साथ ही अपने अंतस्थल में निवास करने की याचना भी। इसी में इस महाकाव्य के शीर्षक की सार्थकता भी निहित है।

सीता के मन में पति के व्यंग्य वचन के प्रति क्षोभ से अधिक रोष इस बात का है कि उन्होंने जग के सम्मुख दशानन को सीता का पिता क्यों नहीं स्वीकारा! संभवतः यश की लिप्सा के कारण ही!' यश की लिप्सा में आगे ही आगे, पितृत्व पतित्व सत्य से भी भागे?' (पृ. 142)

सीता का यह रोष जायज़ है। अवगुण थे दशानन में किंतु गुणों से खाली वह भी न था। उसने सह–अस्तित्व चाहा था किंतु राम को युद्ध स्वीकार्य हुआ। दशानन दो संस्कृतियों के समन्वय की आस लगाए बैठा था। वह चाहता था कि राम जामाता बन कर आएँ और सीता को ले जाएँ, अन्यथा युद्ध में जीत कर ले जाएँ अपनी पत्नी को। इस युद्ध से उत्पन्न महानाश की स्थिति ने वाल्मीकि को भी सोच में जकड़ दिया– 'दो संस्कृतियों के बीच, काश पथ बनता,/पर सेतु बन गया महानाश का कारण।' (पृ. 116)।

सीता के संदर्भ में स्त्री–विमर्श का अत्यंत ही प्रखर स्वरूप सामने आया है जब कि चंद्रनखा (शूर्पनखा) के संदर्भ में स्त्री अधिकार एवं स्वतंत्रता की माँग तो की गई है परंतु मातृत्व की विराटता को सीमित कर दिया गया है। मुख्यतः उत्तर–कथा के अनोखेपन का केन्द्र बिंदु सीता के व्यक्तित्व की नई व्याख्या है। रावण और मंदोदरी की औरस संतान सीता के मन की भावनाओं (अपने जननी–जनक को जानने का सुख, मिलने से पूर्व की उत्कंठा, पितृकुल के सर्वनाश से उत्पन्न संताप एवं विषाद) सीता के अज्ञातवास, सीता विरह में विक्षिप्त चित्त राम की जल समाधि के साथ ही पुत्री विरह (सीता) से व्याकुल वाल्मीकि का जीवन्त चित्रण किया गया है। इसी के साथ दशानन के माथे पर लगा पर–स्त्री अपहरण का कलंक भी धुल गया। प्रकांड विद्वान एवं नीति विशारद रावण के सकारात्मक ज्ञानमय पक्ष को भी लक्ष्मण को रावण द्वारा नीति उपदेश के क्रम में उकेरा गया है।

नीति (व्यावहारिक ज्ञान) की यह थाती तो हर युग में प्रासंगिक थी, है, और रहेगी। सहज प्रवाहमयी, ओजस्वी भाषा एवं वर्णनात्मक तथा संवादात्मक शैली में रचित इस विश्लेषण–प्रधान कृति में आत्मसात करने योग्य बहुत कुछ है।

राम–कथा पर आधारित आधुनिक युगीन शृंखला में डॉ. प्रतिभा सक्सेना के इस सत्ताईस सर्गीय महाकाव्य उत्तर–कथा का स्थान वैसा ही है जैसा संस्कृत परंपरा में भवभूति के उत्तर रामचरित का। राम कथा के पुनराख्यान की ओर बीसवीं शताब्दी में हिन्दी के अनेक कवियों का ध्यान गया तथा अनेक गद्यकारों ने भी अपनी–अपनी दृष्टि से अपनी–अपनी राम कथाएं रचीं। राम कथा जैसी जन–मन में पैठी गाथा को आधार बना कर नया पाठ तैयार करना जहां अत्यंत सुविधाजनक है वहीं क्षुर धारा पर चलने सरीखा खतरनाक है क्योंकि राम केवल एक पात्र भर नहीं हैं, बल्कि भारतीय चरित्र की अद्वितीय कसौटी भी हैं। इसी एकमात्र चरित्र के आदर्श बल के सहारे आज भी भारतीय अस्मिता संपूर्ण विश्व की मूर्द्धा पर अधिष्ठित हैं। यही कारण है कि उन कृतियों को बहुत अधिक जन स्वीकृति नहीं मिल पाती जो राम के चरित्र को विकृत करती हैं, डॉ. प्रतिभा सक्सेना ने यह ध्यान रक्खा है कि सीता की पीड़ा और रावण के स्नेही पितृत्व को उभारने के क्रम में राम के चरित्र को लांछित न किया जाए।

रावण को महिमावान बनाना और राम की भी महिमा की रक्षा करना – यही वह क्षुरधारा है जिस पर कवयित्री ने पूरे कौशल से चल कर दिखाया है। भारतीय जीवन मूल्यों और उत्तर आधुनिक स्त्री–विमर्श के मध्य संतुलन की दृष्टि से भी उत्तर–कथा को एक बेजोड़ कृति माना जा सकता है। ◆

पुस्तक : उत्तर–कथा (महाकाव्य)
कवयित्री : डॉ. प्रतिभा सक्सेना
प्रकाशक : अयन प्रकाशन,
महरौली, नई दिल्ली
संस्करण : प्रथम (2010)
मूल्य : 260 रुपए

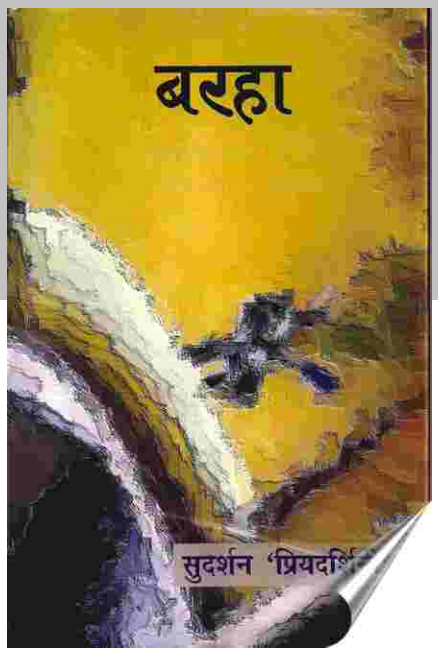

सुदर्शन प्रियदर्शिनी का 'बरहा'

अदिति मजूमदार, अमेरिका

सुदर्शन 'प्रियदर्शिनी' का कविता संग्रह 'बरहा' पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सुन्दर, सरल, निश्छल शब्दों में उन्होंने अपनी कविताओं के द्वारा पाठकों के मन में विषय के बारे में छवि बना दी है। 'प्रियदर्शिनी' जी की 'ऐलान', 'धूप', 'होरी' आदि कविताएँ जीवन के अलग-अलग सत्य और भावनाओं का निदर्शन हैं। उन्होंने कितने ही सरलता से कहा है कि 'प्यास' जो कि जन्मों-जन्मों की है कब आग बनकर जीवन को दहका देती है उसका पता ही नहीं चलता। सुदर्शन 'प्रियदर्शिनी' की कविता 'आत्मा' आत्मा और परमात्मा के तथ्यों के बारे में विवरण है। उन्हीं के शब्दों में-

'आत्मा, परमात्मा का
अंश हो सकती है
पर आत्मसात
नहीं होती
उस परमात्मा में।'

सुदर्शन 'प्रियदर्शिनी' जी का मानना है कि आत्म को कई तरह के उतार- चढ़ाव से गुजरना पड़ता है। ईर्ष्या-द्वेष, काम-क्रोध, लोभ-मोह, हिंसा- प्रताड़ आदि से गुज़रता हुआ शून्य में विलीन हो जाता है। अपनी कविता 'गिलहरी' में इन्सान के वजूद के बारे में क्या खूब कहा है कि डरी सहमी और उलटी लटकी, एक दिन उसे फाँस लग जाती है और वजूद खत्म हो जाता है। उनकी कविता 'प्रवासी मन' मुझे यकीन है कि प्रवासी भारतीयों के मन को ज़रूर छुएगी। वतन से दूरी हर मन को शिथिल बन देता है। यह कविता मेरे भी मन को छू गई है, उन्होंने सच ही कह है कि जब प्रवासी मन सुबकता हुआ कुछ कहता हो तो समझो वतन की याद आई है। चाहे हम कितनी भी ऐशों आराम में रह ले पर अपने वतन को भूल नहीं सकते।

सुदर्शन 'प्रियदर्शिनी' के बारे में जितना लिखा जाए कम है, उनकी कविताओं को पढ़कर और आगे तक पढ़ने की चाह बनी रहती है। इनकी कविताएँ मुक्त छंद में हैं, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी के तनावों और उतार-चढ़ाव का दर्शन करवाती हैं, ऐसा लगता है आप पर ही बीत रही है। 'प्रियदर्शिनी' जी ने महाभारत के पात्रों को अपनी कविता में लाकर उन्होंने पुराने समय से जोड़ने का प्रयास किया है और इस प्रयास में वे सफल भी रही है।

'पुत्र के नाम' कविता में पहले की चार पक्तियां दिल को छू जाती है-

'मेरी मौत एक दिन
कागज़ का टुकड़ा
बन कर तुम तक पहुंचेगी।'

सच में देखा जाए तो जीवन में रोज़ी-रोटी कमाने के लिए व्यस्त हर प्राणी अपने परिवार से, अपने जड़ों से अलग रहने पर मजबूर हो जाता है। इसके कारण अपने परिवार के निकट सदस्यों के मौत की खबर झंझोर देती है पर पैर की बेड़ियों के कारण उस पार जाने का साहस नहीं कर पाते है। सुदर्शन जी इस पीड़ा को सहज और सरल तरीके से कह कर पाठकों के मन को छूने से वंचित नहीं रहीं है। 'यमराज' कविता में यमराज के चले आने पर भी हम अपने काम समेट नहीं सकते। अपनी ज़िन्दगी में इतने काम फैलाए हुए हैं कि उन्हें समेटते-समेटते कब यमराज आ खड़े हुए पता ही न चला। उनके आने पर सोच भी रहे हैं कि क्या-क्या ले कर जायेंगे? लोभ-मोह, निंदा, असत्य लूट-खसोट तो है ही ऊपर से दुनियाई सामान भी है।

अंत में यही कहा जा सकता है, सुदर्शन 'प्रियदर्शिनी' जी अपनी अनुभूतियों की सुन्दर अभिव्यक्ति के द्वारा पाठकों को अकल्पनीय आनंद देने में सफल रही है, अपनी सरलता से उन्होंने कई अछूते भावों को प्रकट किया है। 'वाणी प्रकाशन' की प्रस्तुति संग्रहणीय है।

बरहा
सुदर्शन प्रियदर्शिनी
वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002

समीक्षा के लिए प्राप्त पुस्तकें

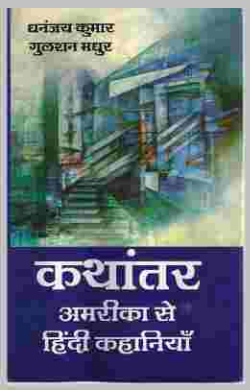

कथांतर
धनंजय कुमार,
गुलशन मधुर
प्रकाशक
शिलालेख
4/32, सुभाष गली,
विश्वास नगर,
दिल्ली –110032
मूल्य : रु. 300.00,
डॉलर 30

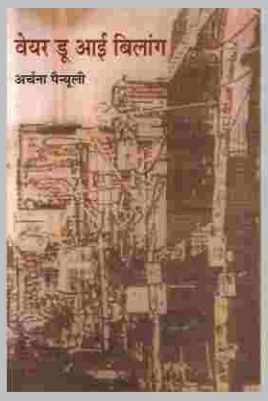

वेयर डू आई बिलांग
अर्चना पेन्यूली
प्रकाशक –
भारतीय ज्ञानपीठ
18, इंस्टीटयूशनल एरिया,
लोधी रोड,
नई दिल्ली –110032
मूल्य: 390 रुपये
DKK 100

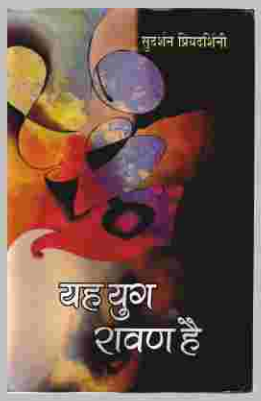

यह युग रावण है
सुदर्शन प्रियदर्शिनी
प्रकाशक –
अयन प्रकाशन
1/20, महरौली,
नई दिल्ली –110030
मूल्य: 250.00 रुपये

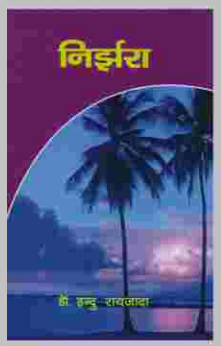

निर्झरा
डॉ. इंदु रायजादा
मुद्रक
शब्द प्रकाशन
74–ए, चकराता रोड,
देहरादून
मूल्य : 100 रुपये

देख लूँ तो चलूं
समीर लाल
शिवना प्रकाशन, पी.सी. लैब,
सम्राट काम्प्लेक्स बेसमेंट, बस
स्टैंड के सामने,
सीहोर–466001 (म.प्र.)
मूल्य : 100 रुपये

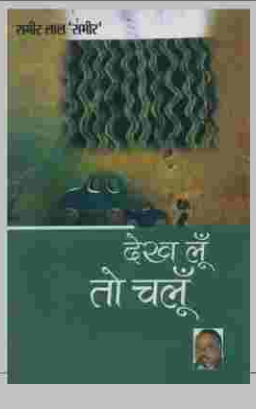

समीक्षा के लिए प्राप्त पुस्तकें

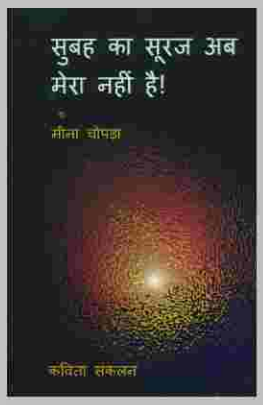

सुबह का सूरज
अब मेरा नहीं है!
मीना चोपड़ा
प्रकाशक :
हिंदी राइटर्स गिल्ड कैनेडा
मूल्य : $12.99

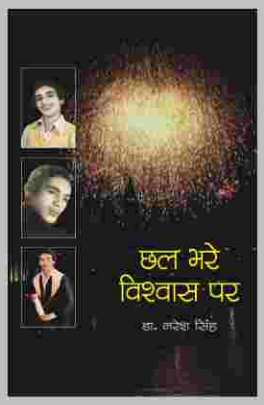

छल भरे विश्वास पर
डॉ. नरेश सिंह
प्रकाशक :
हिंदी साहित्य निकेतन,
बिजनौर उ.प्र.
मूल्य : 200 रुपये

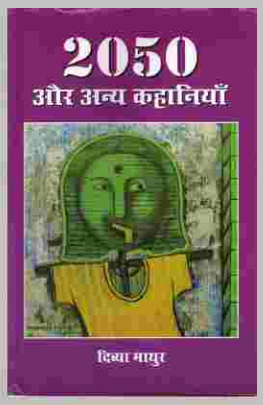

2050 और
अन्य कहानियाँ
दिव्या माथुर
प्रकाशक–
डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.
X-30, ओखला इंडस्ट्रियल
एरिया, फेज –11,
नईदिल्ली –110020

राष्ट्रीय नाट्य
विद्यालय की राज भाषा
मञ्जूषा (अर्द्धवार्षिक)
प्रवासी साहित्य विशेषांक

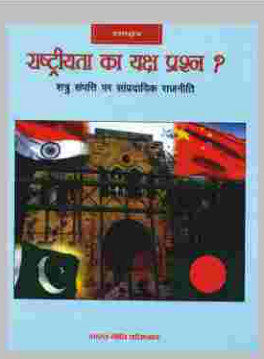

लेखक : मनमोहन शर्मा
ओंकारेश्वर पांडेय
प्रकाशक :
इण्डिया पालिसी फाउण्डेशन,
डी 51, हीज खास,
नयी दिल्ली 110096

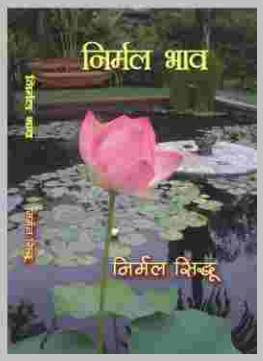

निर्मल भाव
निर्मल सिद्धू
प्रकाशक :
हिंदी राइटर्स गिल्ड,
कैनेडा

२७ वर्षों से लगातार उत्तराखण्ड-भारत से निकलने वाली व हिन्दी के विश्व मिशन में लगी साहित्य को समर्पित अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका

आधारशिला

के सदस्य बनें और बनाएं, हिन्दी व साहित्य को विश्व के जन-जन तक पहुंचाएं

संपादकीय कार्यालय	विदेशों के लिए सदस्यता राशि	आधारशिला प्रकाशन
बड़ी मुखानी, हल्द्वानी-263139	द्विवार्षिक : 100 $	• दिल्ली • देहरादून • नैनीताल
नैनीताल (उत्तराखण्ड) भारत	पांच वर्ष : 250 $	हिन्दी व विश्व साहित्य की पुस्तकों के
	आजीवन : 500 $	प्रतिष्ठित गौरवशाली प्रकाशक

मोबा- +91-9897087248, +91-9410552828, , ई-मेल : adhar_shila2007@rediffmail.com

❄ ❄ ❄ ❄

कैनेडा का सर्वश्रेष्ठ हिन्दी साप्ताहिक ✧ हर सप्ताह 30,000 पाठक

हिन्दी Abroad

www.hindiabroad.com

हिन्दी Abroad

Published by
HINDI ABROAD MEDIA INC.

Chief Editor
Ravi. R. Pandey
(Media Critic, Ex Sub Editor - Times Of India Group, New Delhi)

Editor
Jayashree

News Editor
Firoz Khan

Reporter
Rahul, Shahida

New Delhi Bureau
Rangnath Pandey
(Ex Chief Sub Editor - Navbharat Times, New Delhi)
Shiela Sharma,
Vijay Kumar

Designing
AK Innovations Inc.
416-892-1538

7071 Airport Road, Suite 204A
Mississauga, ON
Canada, L4T 4J3
Tel: 905-673-9929
Fax: 905-673-9114
E-mail: hindiabroad@gmail.com
editor@hindiabroad.com
Web: www.hindiabroad.com

Disclaimer: The opinions expressed in Hindi Abroad may not be those of the publisher. Contents of this publication are covered by copyright and offenders will be prosecuted under the law.

Shil K, Sanwalka, Q.C.

Barrister, Solicitor & Notary

18 WYNFORD DRIVE,
SUITE #602,
DON MILLS, ONT. M3C 3S2

Telephone: (416) 449-7755
Fax: (416) 449-6969

sksanwalka@rogers.com

चित्रकाव्य-कार्यशाला

चित्रकार : अरविन्द नराले

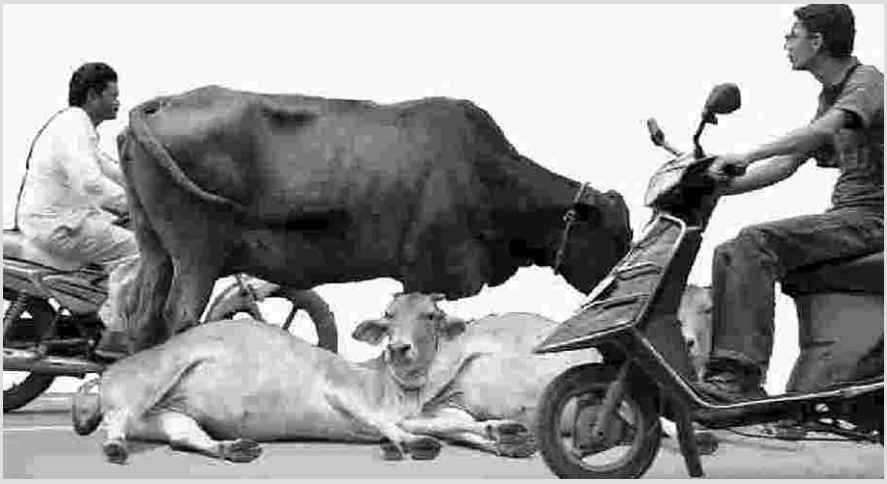

भैंस ने आवाज़ दी – गैया बहनों
आये हैं सरकारी अफ़सर देखो
अब ये घेर कर हम सबको ले जायेंगे
पशुशाला सरकारी
एक–दो दिन की सही होगी
अच्छी खातिरदारी हमारी
नौकर–चाकर और पम्प का ठंडा पानी
नहाना–धोना खूब मालिश मस्तानी
ठीक से पेट भर सानी मिलेगी
डॉक्टरी जांच और दवाई भी चलेगी
मज़े की बात तो यह है तुम सुन लो
मालिक की जेब की कतराई होगी
गैया रम्हाई सुन प्यारी भैंस बहना
एक दम ठीक लगे तुम्हारा कहना
करता नहीं देखभाल मालिक हमारा
मतलब उन्हें तो बस दूध रहे मिलता
सुबह होते ही घर से बाहर हमें करता
भूखों मरें खाएं उलटा सीधा अथवा
उनको तो केवल बचाना पैसा अपना
मालिक हमारा कोई शेर चीता तो नहीं
किन्तु मानव खोल में पिशाच एक निर्दयी।
राज महेश्वरी, कैनेडा

कर के हमको घर से बेघर
देख रहा है कैसे घूर
इंसानों के इस अत्याचार को
भगवन देख, तू भी
खड़ा रहेगा कब तक इतनी दूर!
अमित कुमार सिंह
एमस्टरडैम, नीदरलैंड

दो बैलों की जोड़ी
हमें मुंशी जी की याद दिलाती है
हीरा–मोती के संग
झुरी की याद भी आती है।
सड़क किनारे बैठे वे सोचें
कब वे दिन आएगें
मानव हमें गले लगाएँगे
हम सड़कों में नहीं
उनके दिल में बस जाएँगे।
अदिति मजूमदार,
अमेरिका

चित्र बनाने वाले तूने,
ये कला कहाँ से पाई
सड़क बीच बैठी गौ माता,
मुझे याद वतन की आई
वाहन वाले खड़ रहो,
तुम धारण कर ख़ामोशी
गौ माता समझाती हैं,
भारत की डेमोक्रेसी।

प्रेम मालिक,
कैनेडा

शहरीकरण के दौर में
आ गये पशु सभी सड़क पे,
भाग रहा इंसान तब भी
जाने पँहुचेगा कहाँ पे!
किरन सिंह
एमस्टरडैम, नीदरलैंड

इस चित्र को देखकर आपके मन में कोई रचनात्मक पंक्तियाँ उमड़–घुमड़ रही हैं. तो देर किस बात की तुरन्त ही काग़ज कलम उठाइये और लिखिये. फिर हमें भेज दीजिये. हमारा पता है :

HINDI CHETNA
6 Larksmere Court, Markham,
Ontario, L3R 3R1
e-mail : hindicehetna@yahoo.ca

हिन्दी प्रचारणी सभा की एक यादगार शाम

चतुर्थ हास्य कवि सम्मेलन

विगत दिनों पोर्ट क्रेडिट सेकेन्डरी स्कूल, मिसिसागा (टोरंटो), कनाडा के सभागृह में हिन्दी प्रचारणी सभा एवं विश्व ब्राह्मण सभा के संयुक्त तत्वाधान में प्रति वर्षानुसार एक हास्य कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसमें हिस्सा लेने भारत से पधारे तीन ख्याति प्राप्त कवि डॉ. प्रवीण शुक्ल, डॉ. विष्णु सक्सेना एवं सर्वेश अस्थाना अंतराष्ट्रीय समिति की ओर से अमेरिका और कनाडा के १५ कवि सम्मेलनों के एक माह के प्रवास की १३वीं कड़ी की प्रस्तुति लेकर पधारे थे। कार्यक्रम का शुभारंभ श्री श्याम त्रिपाठी जी के छोटे पुत्र विशाल त्रिपाठी ने अपने ओजपूर्ण संक्षिप्त शब्दों से किया और ज्ञानेश पालीवाल जी महामंत्री विश्व ब्राह्मण सभा को दिया। श्री पालीवाल ने इस कार्यक्रम के आयोजन के लिए प्रायोजकों और मेहमानों का आभार एवं धन्यवाद ज्ञापित कर किया। तत्पश्चात हिन्दी प्रचारणी सभा के अध्यक्ष श्री श्याम त्रिपाठी जी ने अपने निराले अंदाज में कवियों का परिचय देते हुए उनका पुष्प हार एवं तिलक से सम्मान करवाया एवं हिन्दी प्रचारणी सभा की गतिविधियों पर प्रकाश डाला। इसके उपरांत मंच कवियों को सौंपने के पूर्व कवयित्री श्रीमति प्रेम मलिक की हास्य गीतों की सीडी 'बीवी हो गई पास, मियाँ हो गया फेल' का विमोचन किया गया एवं सीडी सभी उपस्थित श्रोताओं को निःशुल्क उपलब्ध करवाई गई।

काव्य पाठ शुरू करने के पूर्व सर्वप्रथम डॉ. विष्णु सक्सेना ने माँ शारदा का स्तुति गान अपने मधुर स्वरों में किया एवं डॉ. प्रवीण शुक्ला को संचालन का कार्यभार सौंपा। एक कुशल संचालक एवं अद्‌भुत कवि डॉ. प्रवीण शुक्ला ने अपना दायित्व बखूबी निभाते हुए चन्द बेहतरीन पंक्तियों के साथ सर्वेश अस्थाना जी को काव्य पाठ के लिए आमंत्रित किया। सर्वेश अस्थाना पहले भी कई बार टोरंटो में काव्य पाठ कर चुके हैं और जाना पहचाना नाम हैं। उन्होंने अपने अलग ही अंदाज में खूब समा बाँधा और दर्शकों की खूब वाह-वाही और तालियाँ लूटीं। उनका तकिया कलाम कि 'मैं सच बोल रहा हूँ, मैं झूठ कभी नहीं बोलता और झूठ बोलना भी नहीं चाहिये' उन्होंने कार्यक्रम के दौरान अनेकों बार इस्तेमाल किया जिसे दर्शकों ने खूब मस्ती के साथ आत्मसात किया। लगभग आधे घंटे श्रोताओं को हँसाते और बीच-बीच में तीखे व्यंग्य साधकर दर्शकों की चेतना जगाते सर्वेश जी अपनी छाप छोड़ने में सफल रहे। उनके काव्य पाठ के तुरंत बाद डॉ. शुक्ला ने डॉ. विष्णु सक्सेना को आवाज दी। डॉ. विष्णु सक्सेना मूलरूप से एक गीतकार हैं और एक गीतकार होने के साथ-साथ उनके गायन की शैली भी खासी प्रभावी है। हास्य को विराम देते हुए श्रृंगार एवं सामाजिक परिस्थितियों पर उन्होंने अपने गीतों से जो माहौल बनाया वह आमतौर पर हास्य कवि सम्मेलन सुनने आये श्रोताओं के बीच बना पाना, डॉ. विष्णु सक्सेना जैसे कुशल और सिद्धहस्त गीतकार के लिए ही संभव है। गीत के बोलों के साथ, डॉ. सक्सेना का मधुर कंठ और निराली शैली समूचे हाल को प्रभावित कर गई। किसी को अहसास भी नहीं रहा कि हास्य कवि सम्मेलन

में कितनी तरलता एवं मधुरता से श्रृंगार और प्रेम के गीतों का समावेश कर दिया गया है।

डॉ. विष्णु सक्सेना के बाद बारी आई स्वयं संचालक महोदय की और उनको एक बेहतरीन परिचय के साथ सर्वेश अस्थाना जी ने आगाज किया। डॉ. प्रवीण शुक्ला एक सधी हुई सिद्ध हस्त हास्य शैली लेकर प्रस्तुत हुए तो लोगों को डॉ. ओम प्रकाश शर्मा 'आदित्य' जी की सहज ही याद हो आई। धनाक्षरी छंदों में रची उनकी रचनाएँ और वाचन शैली तालियों की गड़गड़ाहट रुकने ही नहीं दे रही थी। लोग मंत्र मुग्ध से उन्हें तालियों के साथ सुनते चले गये और पता ही नहीं चला कि कब दूसरे दौर का समय हो चला है। दूसरे दौर में समय की कमी के चलते तीनों कवियों ने इसी क्रम में अपनी रचनायें सुनाकर शाम को यादगार शाम में तब्दील कर दिया और हर तरफ बस यही सुनाई दे रहा था कि वाह खूब शाम रही और अब अगले बरस का इन्तजार है।

कार्यक्रम का समापन तीनों कवियों ने सम्वेत स्वर में अमेरिका प्रवास के दौरान भारत माता को याद करते हुए तीनों के सम्मलित प्रयासों से रचित गीत को गाकर किया, जिसमें उपस्थित श्रोताओं ने भी अपना स्वर मिलाया। अन्त में विश्व ब्राह्मण सभा के अध्यक्ष ने धन्यवाद ज्ञापन किया। कार्यक्रम की रिकार्डिंग के लिए ओमनी टीवी, एटीएन की सेवायें उल्लेखनीय रही। कार्यक्रम की शुरूआत में सभी श्रोताओं के लिए स्वादिष्ट स्वल्पाहार की व्यवस्था की गई थी। कुल मिला कर हिन्दी प्रचारणी सभा एवं विश्व ब्राह्मण सभा के संयुक्त तत्वाधान में हुए इस हास्य कवि सम्मेलन की सफलता नें एक यादगार शाम दी जिसे टोरंटो के हिन्दी प्रेमी लम्बे समय तक याद रखेंगे।

प्रस्तुति : समीर लाल, कैनेडा

साहित्यिक समाचार

यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्थ कैरोलाईना में 'कौन-सी ज़मीन अपनी' का विमोचन

चित्र में (दाएँ से बाएँ) डॉ. अफ़रोज़ ताज, श्रीमती सरोज शर्मा, श्रीमती ऊषा देव, श्रीमती बिंदु सिंह, रमेश शौनक.

हिन्दी जगत की जानी-मानी कवयित्री, कहानी लेखिका, पत्रकार, रेडियो, टी.वी. तथा रंगमंच की कलाकार सुधा ओम ढींगरा के कहानी संग्रह 'कौन सी ज़मीन अपनी' का विमोचन, यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्थ कैरोलाईना के तत्त्वाधान में प्रो. अफ़रोज़ ताज द्वारा आयोजित समारोह में संपन्न हुआ। सभा का आरम्भ श्री जान काल्डवेल की स्वागत पंक्तियों और हिंदी विकास मंडल की अध्यक्षा श्रीमती सरोज शर्मा के आशीर्वाद से हुआ। डॉ. अफ़रोज़ ताज ने सुधा ओम ढींगरा की कृतियों पर चर्चा करते हुए उनकी सीधी सरल भाषा में कहानियाँ लिखने के अंदाज़ की बहुत प्रशंसा की। उन्होंने यह भी कहा कि कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि वे भारत से इतनी दूर बैठी लिख रही हैं। उनकी कहानियों में आधुनिकता के साथ- साथ परम्परावाद भी है। जहाँ एक ओर पंजाब के किसानों की बात करतीं हैं तो दूसरी ओर अमरीका के अत्याधुनिक परिवेश का चित्रण भी करतीं हैं। इस समारोह में हिंदी-उर्दू जगत के कई विशिष्ट व्यक्तित्व शामिल हुए जिन्होंने न केवल अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की बल्कि 'कौन सी ज़मीन अपनी' की बहुत सराहना की। प्रो. अफ़रोज़ ने कहा कि सुधा जी की रचनाएँ अमेरिका की कई यूनिवर्सिटीज़ के हिंदी कोर्स में पढ़ाई जाती हैं, इनकी कृतियाँ भारत में भी हिन्दी कोर्स में शामिल होनी चाहिए। रमेश शौनक ने सुधा जी की कहानियाँ को 'समाज की जमी हुई सिल' को तोड़ती कहानियाँ बताया और बिंदु सिंह ने 'कौन सी ज़मीन अपनी' के नारी पात्रों पर चर्चा की। उनके अनुसार सुधा जी की कहानियों के नारी पात्र चुप रह कर प्रतिवाद करते हैं, शोर-शराबा नहीं करते। इनकी कहानियों की नारियाँ कभी भी अपनी परम्पराओं को नहीं भूलतीं, जो ग़लत है उसका प्रतिरोध करते हुए अपने आपको सक्षम और सशक्त बनातीं हैं। श्रीमती सीमा फ़ारूखी ने सुधा जी की 'एग्ज़िट' कहानी को अपनी ही कहानी बताते हुए कहा कि इनकी कहानियाँ हमारी आम ज़िन्दगी से बहुत जुड़ी हुई हैं। श्रीमती उषा देव ने पंकज सुबीर और अदिति मजूमदार ने अखिलेश शुक्ल की 'कौन सी ज़मीन अपनी' पर लिखी समीक्षाएं पढ़ीं। अंत में सुधा जी की 'एग्ज़िट' कहानी का उन्हीं के द्वारा पाठ हुआ। रंगमंच और रेडियो से जुड़े होने के कारण उनके कहानी पढ़ने के अंदाज़ से लोग मन्त्र-मुग्ध हो गए। रात्रि-भोज के साथ सभा का समापन हुआ।

प्रकाशक - भावना प्रकाशन, 109-ए, पटपड़गंज, दिल्ली -110091

प्रस्तुति : अदिति मजूमदार, यू.एस.ए.

साहित्यिक समाचार

मल्टी मीडिया प्रोडक्शन से हिन्दी के लिए धन एकत्रित किया

गत दिनों हिन्दी विकास मंडल एवं शिडोरी प्रोडक्शंज़ ने बालीवुड के कपूर परिवार को हिन्दू भवन (मोर्रिस्विल्ल, नॉर्थ कैरोलाईना) के सभागार में संगीत, दृश्य, नाटक, रौशनी एवं ध्वनि के सम्मिश्रण से सजा शो प्रस्तुत कर श्रृद्धांजलि भेंट की। 25 कलाकारों ने इस शो में हिस्सा लिया। इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि हॉल खचाखच भर गया था और बहुत से लोगों को कार्यक्रम देखे बिना निराश लौटना पड़ा। यह कार्यक्रम स्थानीय कलाकारों ने मिल कर तैयार किया था और यह अपनी तरह का पहला कार्यक्रम नॉर्थ कैरोलाईना के ट्राईएंगल एरिया में हुआ। इससे प्राप्त धन हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में लगाया जायेगा।

'इन्दु शर्मा कथा सम्मान' एवं 'पद्मानंद साहित्य सम्मान' समारोह सम्पन्न

ब्रिटेन में भारत के उच्चायुक्त श्री नलिन सूरी ने ब्रिटिश सांसद के हाउस ऑफ़ कॉमन्स में हिन्दी लेखक विकास कुमार झा को उनके कथा उपन्यास 'मैकलुस्कीगंज' के लिये १७वां अंतर्राष्ट्रीय 'इन्दु शर्मा कथा सम्मान' और लेस्टर निवासी ब्रिटिश हिन्दी लेखिका श्रीमती नीना पॉल को 12वां 'पद्मानंद साहित्य सम्मान' प्रदान किया। इस अवसर पर विशेष रूप से प्रकाशित किये गये 'प्रवासी संसार' के कहानी विशेषांक (अतिथि संपादक, तेजेन्द्र शर्मा) की प्रतियां संपादक राकेश पाण्डे ने मंचासीन प्रमुख अतिथियों को दीं।

श्रीमती पूर्णिमा वर्मन का भव्य स्वागत

नन्हीं जलपरी के देश की राजधानी डेन्मार्क के प्रथम सांस्कृतिक कैफे ट्रांकेबार में वैश्विक समुदाय की संरक्षक श्रीमती पूर्णिमा वर्मन का भव्य स्वागत किया गया, जिसमें भारतीय मूल के धार्मिक, सामाजिक और साहित्यिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस कैफे की स्थापना भारतीय मूल के रेडियो कलाकार, प्रोड्यूसर, उद्घोषक और ग़ज़लकार तथा रेडियो सबरंग से संस्थापक श्री चाँद शुक्ला हदियाबादी तथा मूलरूप से डेनमार्क की निवासी चित्रकार, कवि, लेखक, अनुवादक एवं सामाजिक कार्यकर्ता श्रीमती रिगमोर कुबलाक रासमुसेन (रिग मोर) ने की है।

वातायन
पोएट्री ऑन साउथ बैंक सम्मान समारोह-2011

नेहरू सेंटर और यू.के. हिंदी समिति के तत्वाधान एवं बैरोनैस फ्लैदर के संरक्षण में 30 जून के दिन लन्दन के हाउस ऑफ़ लोर्ड्स के एक ऐतिहासिक कमरे में वातायन : पोएट्री ऑन साउथ बैंक सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में प्रसिद्ध कवि और लेखक श्री प्रसून जोशी एवं श्री जावेद अख्तर को वातायन अवार्ड से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में प्रसिद्ध अभिनेत्री शबाना आज़मी, लोर्ड देसी एवं डॉ. मधुप मोहता ने इस समारोह की शोभा बढाई।

श्रद्धांजलि

हमें बड़े दुःख के साथ कहना पड़ता है कि सत्यागोपाल जी हमारे बीच नहीं रहीं। वे काफी समय से रोगग्रस्त थीं। सत्या जी को हिंदी से बहुत लगाव था और 'हिंदी चेतना' की नियमित सदस्य व सुधी पाठक थीं और कभी-कभी छोटी-छोटी कविताएँ और लेख भी लिखती थीं। उन्होंने 'हिन्दी चेतना' के सहयोग के लिए ओटवा में काफी परिश्रम किया। भारत छोड़ने के बाद से आपने हिंदी के प्रचार और प्रसार के लिए बहुत सक्रिय काम किया। 'हिंदी चेतना' परिवार सत्याजी को अपनी श्रद्धांजलि के पुष्प अर्पित करता है।

साहित्यिक समाचार

हेमंत फाउंडेशन द्वारा स्थापित हिन्दी उर्दू मंच का उद्घाटन

हेमंत फाउंडेशन तथा उर्दू मरकज़ द्वारा स्थापित हिन्दी उर्दू मंच का उद्घाटन समारोह 25 जून संध्या ६ बजे उर्दू मरकज़ सभागार मे सम्पन्न हुआ। इस काव्य गज़ल संध्या में उर्दू के शायर रियाज़ मुन्सिफ़, वकार आज़मी, रेखा रोशनी, शादाब सिद्दीकी, फारुक आशना, सैयद रियाज़, जमील मुर्सापुरी, सोहेल अख्तर, जुबैर आज़मी, रफ़ीक जाफ़र, अब्दुल अहद साज़ ने अपनी गज़लें पढ़ीं वहीं मंच की कार्याध्यक्ष तथा शायरा सुमीता केशवा ने 'हद में रहने की बात करते हो' सुना कर वाह-वाही पाई। उर्दू के वरिष्ठ शायर दाऊद कश्मीरी ने रवीन्द्र नाथ टैगोर के शेर बांग्ला भाषा में सुनाये। हरि मृदुल, कैलाश सेंगर, आलोक भट्टाचार्य, शिल्पा सोनटक्के और अनीता रवि ने अपनी कविताओं से समा बांध दिया। इस मंच के लिए महाराष्ट्र साहित्य अकादमी तथा लाहौर से फैज़ अहमद फैज़ की बेटी मुनीज़ा हाशमी ने बधाई संदेश भेजा। कार्यक्रम का संचालन आलोक भट्टाचार्य तथा आभार जुबैर आज़मी ने किया।

Learn Hindi!

सु+भाषा SU+BHASHA KIDS HINDI

Magnetic board letter set

INTRODUCTORY SET / LEVEL 1

Includes:

* 8.5" x 11" metal board
* 49 Devanagari magnatic letters
* Sound chart on back of board

For ages 4 and up

KIDS HINDI.COM
SUBHASHA.COM
spanchii@yahoo.com
Ph. 1-508-872-0012

❄ ❄ ❄ ❄

BMS graphics

Choose from a variety of
Birthday - Mundan - Janoi - Anniversary
Indian & western

Wedding Invitations

Choose your own language

शादी, मुंडन,सालगिरह, जनेऊ कोई भी हो शुभ संस्कार।
हर प्रकार के निमंत्रण के लिए हमारी सेवायें हैं सदा तैय्यार।।

21 Bradstone Square, Scarborough, (Toronto) Ontario M1B 1W1
Tel: 416.565.4446 416.292.7959 Fax: 416.292.7969
E-mail: bmsgraphics@rogers.com

विलोम चित्र काव्य शाला

चित्रकार : अरविन्द नराले
कवि : सुरेन्द्र पाठक

अपने रसोई घर के अंदर, एक बुढ़िया है खड़ी हुई
दोनों हाथ से मर्तबान दबाकर, ढ़क्कन पे है नज़र गड़ी हुयी
बूढ़ी उमर होने के कारण, सफेद हुए हैं सर के बाल
कर लिया उन्हें काट के आधा, सुविधा उन्हें सके संभाल
सुबह–सुबह उठते ही हो गया, अपने पति से उसका झगड़ा
जबसे हुआ रिटायर तभी से, घर में डाले रोज़ ही रफ्ड़ा
काम के लिए कहें तो कह दे – 'मुझको पढ़नी है अखबार'
या, 'बाहर बेंच पर बैठकर, सुलगा लेता हूँ सिगार'
सुबह कहा, मर्तबान खोल दो, जो मुझसे नहीं था खुलता
'तुमसे कोई काम न होगा', कहते हुए आ गया झुलता
जोर लगाया पर खुला नहीं, गाली दे दे मारा झटका
तूने बंद किया, तू ही खोल, मेरे सामने लाकर पटका
जो खुला नहीं वो क्या मैंने, बंद किया था जान बूझकर
जो बाहर को भाग गया है, मुझपे सारा कसूर थोपकर
बड़े चैन से रहती थी घर, जब ये करता था काम
ना झड़क, ना झकझक, काम करूं या करूं आराम
साल हुआ रिटायर हुए, मैं तो आ गई इससे तंग
तू तू मैं से अब झकझक, कल को होने लगेगी जंग।

चित्र को उल्टा करके

चित्र उलटा करके देखो, कहाँ बैठे पति जी आकर
बेंच पे आकर बैठ गए हैं, पी रहे सिगार सुलगा कर
गुस्से में भरा बैठा हुआ है, गोल टोपी सर पे पहन कर
देख रहा कुछ और जगा, सोच रहा बड़े ध्यान लगा कर
छोटी छोटी मूंछें रखी हैं, और बकरी जैसी दाढ़ी
सोच रहा था इसे तरासे, कब तक चलेगी अपनी गाड़ी
इससे तो अच्छा यही, कि मैं करता रहता काम
सारा दिन मैं बाहर बिताकर, आ जाता घर काटने शाम!
देखो सामने मेज़ पर बैठी, बिल्ली भी सोच विचारी
'कहीं मैं इन दोनों के बीच, फजूल में जाऊं न मारी'
अब तक तो चला था ठीक, एक डांटे दूजा प्यार जताए
एक दे रोटी का टुकड़ा, तो दूजा मुझे दूध पिलाए
दोनों लगे इसी होड़ में, इनमें से एक को करूं पसंद
क्या करूं मैं नहीं हूँ मानव, जो जोड़ूँ तोड़ूं रोज़ सम्बन्ध।

कभी सोचे – 'क्यों न मैं, बन्दर जैसे ही बन जाऊं
दोनों की फूट का लाभ उठाकर, खूब मैं मौज उड़ाऊं
मगर फिर सोचूं बन्दर तो, मानव का पूर्वकाल का जन्मदाता
कुछ ना कुछ तो हर जीव का बच्चा, अपने पिता के गुण पाता
मैं तो बिल्ली हूँ, मैं तो, अपनी ही रीत निभाऊंगीगी
जो भी मुझसे प्यार करेगा, मैं उसके पास ही जाऊंगी'

Indo-Canada
Income Tax Services Ltd.

Income Tax / Book keeping Experts
Management Consultants

☎ 905-264-9599

905-264-9587

15 Ayton Crescent, Woodbridge, Ontario L4L 7H8

Mistaan Catering & Sweets Inc.

Specializing in Bengali Sweets We do catering for Weddings & Parties

मिष्ठान की मिठाइयाँ
मिष्ठान की मिठाइयाँ
खाओ रसगुल्ले और रस मलाइयाँ

Our Daily Take-out Foods include:

Channa Bhatura	Aloo Ghobi
Malai Kofta	Matter Paneer
Channa Masala	Chicken Masala
Chicken Tikka	Tandoori Chicken
Butter Chicken	Goat Curry

& many more delicious items

अब आप बैठ कर खाने-पीने का आनन्द ले सकते हैं
460 McNicoll Avenue, North York, Ontario M2H 2E1
Visit Our Website: www.mistaan.com
Telephone: (416) 502-2737 **Fax: (416) 502-0044**

अपनी स्वार्थ की दुनिया है

✍ *प्रतिभा सिंह, अमेरिका*

मन्दिर में बजती घंटी सुन,
मन क्यों इतना खुश होता है।
मस्जिद की अल्लाह-हू-अकबर,
मन को पवन सा लगता है।
गिरजाघर का घंटा क्यों,
मन को राहत सा देता है।
गुरुद्वारे की गुरुवाणी तो,
अंधों को राह दिखलाती है।
है तरह-तरह की आवाज़ें,
एक ही राह दिखलाने को।

पथ भटक गई मानवता,
समझाए तो समझे कौन?
भाई-भाई के साथ ही,
करता इतनी गद्दारी क्यों?
रोती हर पल है ममता,
पूछे आँसूं नहीं सूखते क्यों?
रोटी की बात तो भली सही,
है लालच के सब मारे क्यों?
स्वार्थ की अपनी दुनिया में,
मंदिर मस्जिद का जाने क्यों?

आप अपने जीवन के अनुभव किसी से बाँटना चाहते हैं। जीवन की खुशियाँ और ग़मों को साँझा करना चाहते हैं तो उठाएँ कलम और लिख डालें अपने मन के भाव। 'अधेड़ उम्र में थामी कलम' आप का स्तम्भ है। अपनी उम्र की ओर ध्यान मत दें। लोग क्या कहेंगे यह न सोचें। 'हिन्दी चेतना' परिवार आप के साथ है।

Hindi Pracharni Sabha

(Non-Profit Chatitable Organization)

Membership Form

For Donations and Life Membership we will provide a Tax Receipt

Annual Subscription: **$25.00 Canada and U.S.A.**

Life Membership: **$200.00**

Donation: **$ _____**

Method of Payment: cheque, payable to " Hindi Prachani Sabha"

For India:
CA - S.K.DHINGRA
S.K.Dhingra & Co
Chartered Accountants
501 Kirti Shikhar, District Center
Janak Puri, New Delhi - 110058, India
Ph - 25531678, 25505467

वार्षिक --३०० रुपये
दो वर्ष --६०० रुपये
पाँच वर्ष --१५०० रुपये
आजीवन --३००० रुपये

Name:_____

Address: _____

_____

Telephone: Home: _____Business_____

e-mail:_____

****

Contact in Canada:

Hindi Pracharni Sabha
6 Larksmere Court
Markham, Ontario L3R 3R1
Canada
(905)-475-7165 Fax: 905-475-8667
e-mail: hindichetna@yahoo.ca

Contact in USA:

Dr. Sudha Om Dingra
101 Guymon Court
Morrisville, North Carolina
NC27560, USA
(919)-678-9056
e-mail: ceddlt@yahoo.com

FAMILY DENTIST

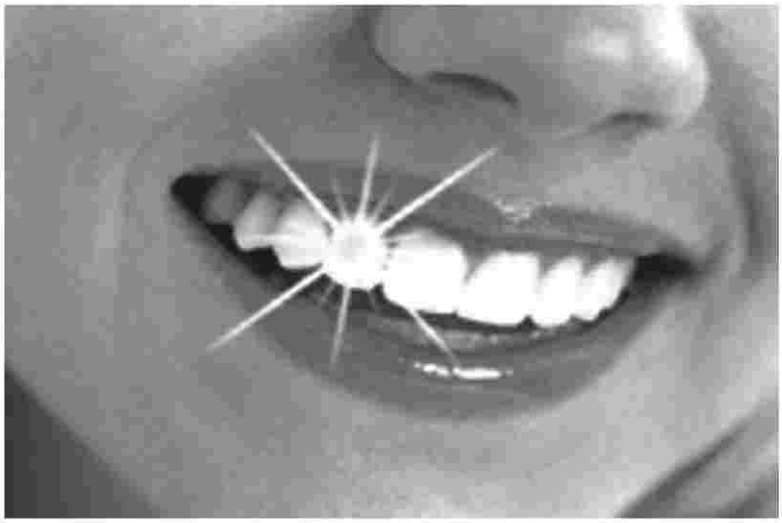

Dr. N.C. Sharma
Dental Surgeon

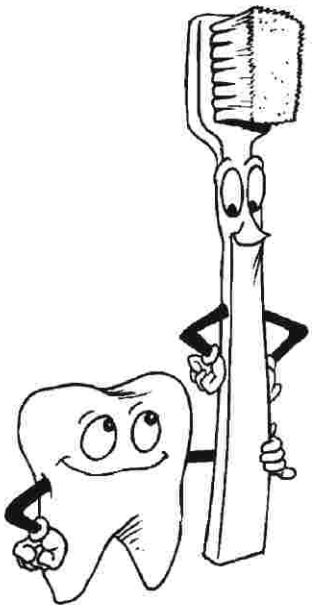

Dr. C. Ram Goyal
Family Dentist

Dr. Narula Jatinder
Family Dentist

Dr. Kiran Arora
Family Dentist

Call us at: 416-222-5718

1100 Sheppard Avenue East, Suite 211, Toronto, Ontario M2K 2W1 Fax: 416-222-9777

आख़िरी पन्ना

ऋतु परिवर्तन का प्रभाव अक्सर मानव मन पर होता है। ऋतुओं के बदलाव के साथ मन की मनोदशा में अन्तर आता है और रचनाकारों की कलम तो कई बार परिवर्तन की लपेट में आ जाती है, उसकी मनःस्थिति भी बदल जाती है, कभी वह लिखना चाहती है तो कभी विरोध कर देती है। अन्य लेखकों के बारे में मैं अधिक नहीं कह सकती कुछेक ने इस परिवर्तन के बारे में बताया है पर मेरे साथ अधिकतर ऐसा होता है कि कलम अपना मिजाज़ दिखाने लगती है। मैं भी उसे विराम देकर पढ़ने में अपना ध्यान लगा लेती हूँ। इस तरह अच्छा साहित्य पढ़ने का समय मिल जाता है।

कुछ दिन पहले ही David S. Reynold की पुस्तक Mightier Than The Sword पढ़ी। यह पुस्तक 1852 में Harriet Beecher Stowe द्वारा लिखित उपन्यास "Uncle Tom's Cabin" से प्रभावित हो कर लिखी गई है। "Uncle Tom's Cabin" गुलाम अश्वेतों के जीवन का सजीव चित्रण करता 1852 में लिखा गया पहला ऐसा उपन्यास था जिसने क्रांति की लहर अश्वेतों में पैदा कर दी थी। इस पुस्तक की उस समय अमेरिका में 310,000 प्रतियाँ बिकी थीं और इससे तीन गुणा इंग्लैण्ड में जो कि उस समय एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी। इसका प्रभाव यह हुआ कि अमेरिका के उत्तरी प्रान्तों में अश्वेतों को गुलाम बनाने के विरुद्ध आवाज़ उठाई गई और कई प्रश्न चिह्न लगाए गए। चाहे अमेरिका के दक्षिण भाग ने इसे दबा दिया और 1857 में मैरीलैंड के एक स्वतंत्र अश्वेत किसान और प्रचारक को उसके घर से पकड़ कर 10 वर्षों के लिए जेल में भेज दिया क्योंकि उसने इस उपन्यास में दी गई सामग्री को अश्वेतों में जागृति और प्रेरणा लाने के लिए प्रयोग किया था। अमेरिका के दक्षिणी प्रान्तों में अश्वेतों को स्वतंत्रता दिलवाने में इस उपन्यास का बहुत बड़ा हाथ माना जाता है, चाहे वर्षों लग गए अश्वेतों को स्वतंत्रता लेने में। पूरी दुनिया के साहित्य में इस तरह के बहुत से उदाहरण हैं जब साहित्य समय, समाज और जनहित को लेकर लिखा गया और उसने समाज में परिवर्तन लाये। यह सब पढ़ते हुए एक प्रश्न हिन्दी साहित्य को लेकर मस्तिष्क में कौंध गया कि क्या आज समाज, समय और जनहित को लेकर ऐसा साहित्य रचा जा रहा है जो भारत में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों, भ्रष्टाचार और बेईमानी के विरुद्ध जनक्रांति लाने या व्यवस्था के विरुद्ध जन आन्दोलन करवाने में सहायक हो...

अगला अंक प्रतिष्ठित व्यंग्यकार, व्यंग्य–यात्रा के संपादक प्रेम जनमेजय जी को समर्पित है। मिलती हूँ अगले अंक में....

आपकी मित्र
सुधा ओम ढींगरा